6423

6423

झाँसी

इतिवृत्त ❁ स्थापत्य ❁ कला ❁ सांस्कृतिकी

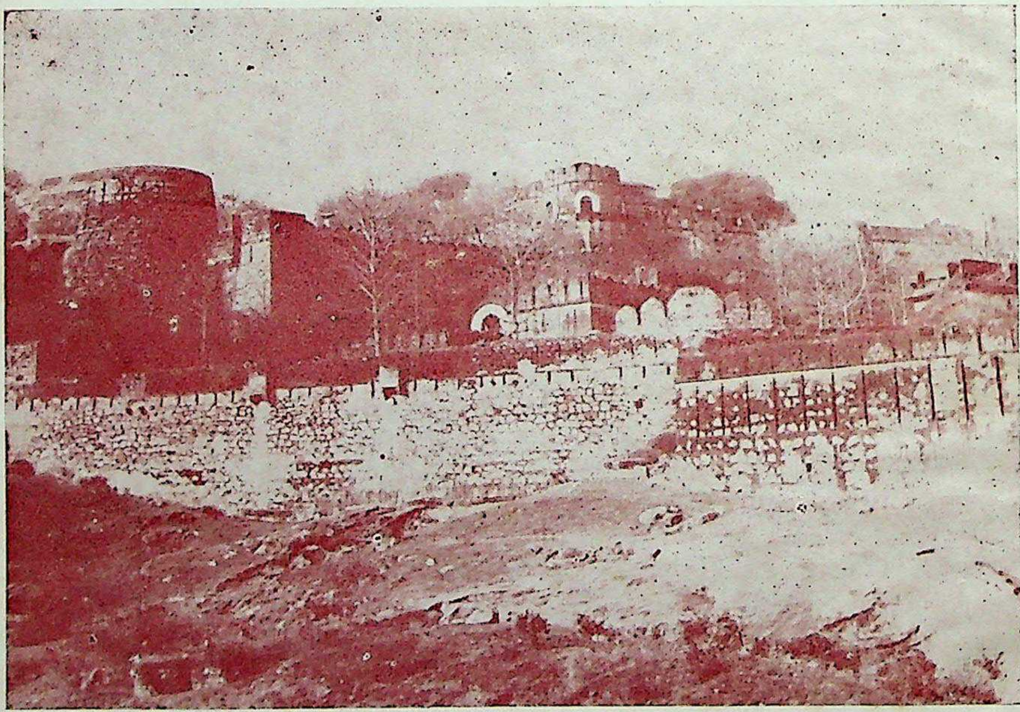

डॉ. रुद्र पाण्डेय

झाँसी

इतिवृत्त ❁ स्थापत्य ❁ कला ❁ सांस्कृतिकी

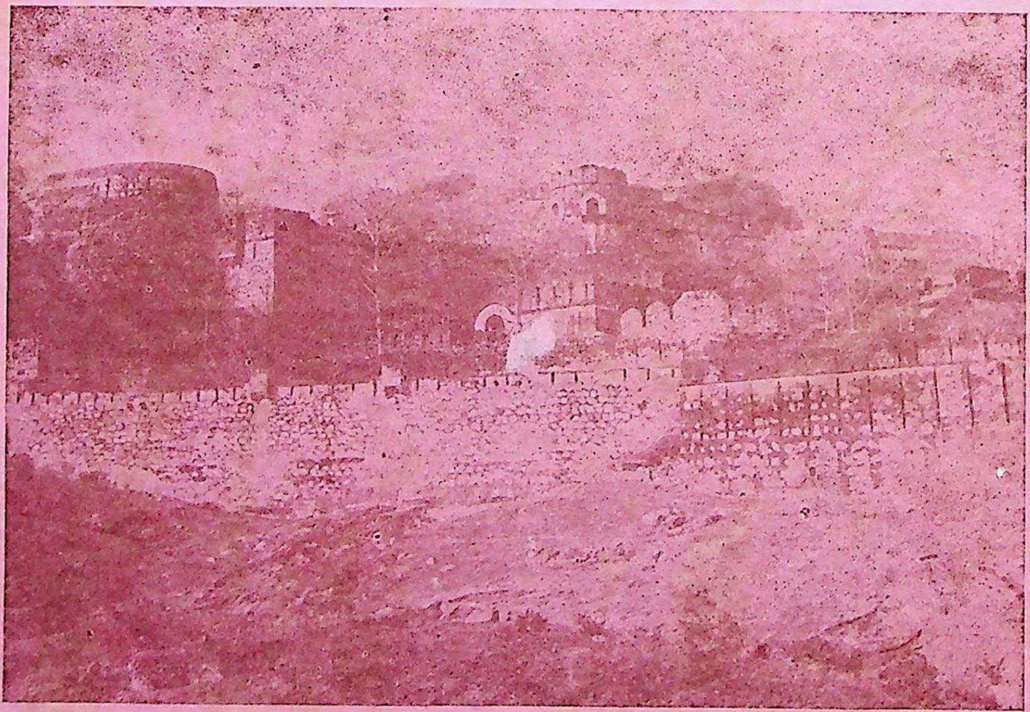

डॉ. रुद्र पाण्डेय

झांसी

(इतिवृत्त ❀ स्थापत्य ❀ कला ❀ सांस्कृतिकी)

State Museum Library Lucknow
6423

डॉ. रुद्रकिशोर पाण्डेय
एम. ए. पी.एच. डी.
डिप्लोमा संग्रहालय विज्ञान

प्रकाशक :
आदित्य रश्मि प्रकाशन
लश्कर, ग्वालियर (म. प्र.)
1990

"झाँसी"

(श्रीमान् जुगल किशोर पाण्डेय स्मृति ग्रन्थमाला)

मुख्य पृष्ठ छाया चित्र— झाँसी दुर्ग

राजकीय संग्रहालय, लखनऊ
क्रमसंख्या 6423
प्राप्ति तिथि 28.3.57
विभाग
श्रेणी
STATE MUSEUM, LUCKNOW.

प्रकाशक :
आदित्य रश्मि प्रकाशन
206, सिन्धी कॉलोनी, लश्कर, ग्वालियर

मूल्य । 20 रुपये

सर्वाधिकार प्रकाशक के आधीन

मुद्रक :
केशरी नन्दन मुद्रणालय,
सैलार की गोठ, लश्कर ग्वालियर

श्रद्धेय

प्रो० बी० बी० लाल

महानिदेशक भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण

(सेवानिवृत्त)

को

सादर भेंट

रुद्र पाण्डेय

प्राक्कथन

झाँसी का गोरवमय इतिहास राजनीतिक तथा सांस्कृतिक दोनों दृष्टियों से वरेण्य है। इस जनपद को प्रकृति ने सँवारा और यहाँ के निवासी-जनों ने उसे कला और साहित्य से मंडित किया। यहाँ विंध्य की उपत्यकाओं तथा वेत्रवती की लहरों में शौर्य और शांति के स्वर साथ-साथ निनादित हुए।

गोपाचल की तरह झाँसी ने देश के मध्य भाग की रक्षा में अपनी भूमिका निबाही। यहाँ का दुर्ग भारतीय स्थापत्य की विशेषताओं से सम्पन्न है। अर्वाचीन युग में रानी लक्ष्मीबाई के असीम साहस और राष्ट्र-प्रेम के आदर्श का वह अमर स्मारक है।

प्राचीन तथा मध्यकाल में झाँसी नगर तथा उसके समीपस्थ अनेक स्थलों में मन्दिर-वास्तु और मूर्तिकला का व्यापक रूप से उन्नयन हुआ। इन स्थलों में देवगढ़, कालपी, एरच, दुधई, चांदपुर आदि के नाम विशेष उल्लेखनीय है।

झाँसी के पुरातात्विक अवशेषों के परिशीलन से ज्ञात होता है कि धार्मिक तथा लौकिक दोनों क्षेत्रों में यहां विकास के नये आयाम उपस्थित हुए। झाँसी, एरच तथा अन्य कई स्थलों से प्राचीन सिक्कों तथा मुहरों की प्राप्ति हुई है। इनसे इस जनपद का इतिहास ईसवी पूर्व 200 तक पहुंचा है। गोपाद्रि और कालंजर के बीच स्थित झाँसी के भूभाग ने भारतीय सांस्कृतिक विकास में विशेष भूमिका निबाही।

प्रस्तुत पुस्तक के लेखक डॉ. रुद्रकिशोर पाण्डेय ने बड़े श्रम के साथ झाँसी जनपद के इतिहास की स्रोत सामग्री की खोज और उसके अनुशीलन का कार्य सम्पन्न किया है। इससे एक बड़ी कमी की पूर्ति हुई है। इसके लिये लेखक साधुवाद का पात्र है।

कृष्णदत्त वाजपेयी
15 अगस्त 1990
पद्माकर नगर,
सागर,

टैगोर प्रोफेसर तथा अध्यक्ष :
प्राचीन भारतीय इतिहास, संस्कृति तथा
पुरातत्व विभाग, सागर विश्वविद्यालय,
सागर (सेवानिवृत्ति)

आमुख

झाँसी, भारतवर्ष की स्वातंत्र्य-चेतना का प्रतीक है। महान ऐतिहासिक परम्परा तथा सांस्कृतिक विरासत के कारण इसका देश के इतिहास में अद्वितीय महत्व है। यहां की वीरांगना महारानी लक्ष्मीबाई के स्वदेश प्रेम तथा शौर्य-पूर्ण बलिदान से भारतवासी गौरवान्वित हैं।

महारानी लक्ष्मीबाई की शौर्यगाथा तथा झांसी के मनमोहक स्मारकों ने मुझे आकर्षित कर उत्सुकता जागृत की कि इनके विषय में ज्ञान प्राप्त करूं। जिज्ञासा के फलस्वरूप इस गौरवशाली नगर का जो परिचय प्राप्त हुआ वह आपके समक्ष ग्रन्थाकार प्रस्तुत करते हुये मुझे हर्ष है। सुरक्षा प्राचीर से आवेष्ठित झांसी नगर एवं इर्द-गिर्द के स्मारको का पुरातात्विक सर्वेक्षण तथा मूल ऐतिहासिक स्रोत इस ग्रन्थ की आधार शिला हैं।

इस ग्रन्थ को साकार करने में अनेक कृपालु महानुभावों का मार्गदर्शन एवं प्रोत्साहन प्राप्त हुआ मैं उनका कृतज्ञ हूँ हार्दिक विनय ज्ञापित करता हूँ।

प्रो. के. डी. वाजपेयी ने सदैव स्नेह प्रदान कर एवं इस ग्रन्थ का प्राक्कथन लिखकर मुझे अनुग्रहीत किया है, मैं उनका कृतज्ञ हूं।

प्रो. के. पी. नौटियाल अध्यक्ष प्रा. भा. इ. सं. एवं पुरातत्व विभाग गढवाल वि. वि. श्रीनगर एवं डा. भूपेशचन्द्र सक्सेना अध्यक्ष इतिहास विभाग मेरठ कालेज मेरठ का हार्दिक आभारी हूं जिनकी प्रेरणा एवं स्नेह से यह कार्य संभव हुआ है।

डॉ. एस. डी. त्रिवेदी निदेशक राज्य संग्रहालय लखनऊ ने इस ग्रन्थ की पाण्डुलिपि का अध्ययन कर अनेक बहुमूल्य सुझाव प्रदान कर अनुग्रहीत किया है, मैं उनका कृतज्ञ हूं।

इस अवसर पर मुझे अपने नगर ग्वालियर के सुप्रसिद्ध इतिहासकार डा. हरिहर निवास द्विवेदी (विद्यामंदिर मुरार) जिनका कि मुझे विशेष स्नेह प्राप्त था स्मरण हो आना स्वाभाविक है, दैव योग से श्रद्धेय द्विवेदी जी अब हमारे बीच नहीं है, परन्तु उनके अनुज श्री शांतिचन्द्र जी ने इस ग्रन्थ हेतु नारोशंकर के दान पत्र की सनद का चित्र उपलब्ध करवाकर उस कमी को पूरा करने का सार्थक प्रयास किया है मैं उनका ऋणी हूँ एवं हार्दिक कृतज्ञता व्यक्त करता हूं, झांसी के इतिहास के संदर्भ में इस दानपत्र (चित्र क्रम 14 तथा परिशिष्ट-1) का अत्यधिक महत्व है क्यों कि इसमें झाँसी का प्राचीन नाम बलवंत नगर अंकित है।

श्री जितेन्द्र कुमार निदेशक राजकीय संग्रहालय झाँसी ने इस ग्रन्थ हेतु कतिपय छायाचित्र उपलब्ध करवाकर तथा महत्वपूर्ण सुझाव देकर मुझे कृतार्थ किया है मैं उनका आभारी हूँ।

डा. आर. सी. शर्मा निदेशक भारतीय संग्रहालय कलकत्ता, डा. एस. सी. काला निदेशक इलाहबाद सँग्रहालय (सेवा निवृत्त) डॉ. एन. पी. जोशी निदेशक राज्य संग्रहालय लखनऊ (सेवा निवृत्त) भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण आगरा मण्डल के अधीक्षण पुरातत्व विद श्री शंकरनाथ, लखनऊ मंडल के अधीक्षण पुरातत्वविद श्री एच. के. नारायण, श्री प्रतापभानु सिंह सेंगर उप अधीक्षण पुरातत्वविद आगरा मंडल तथा डा. वेन्कटेश सहायक अधीक्षक पुरातत्वविद उत्तर क्षेत्र झांसी से प्राप्त प्रोत्साहन एवं सहयोग हेतु मैं हार्दिक आभार व्यक्त करता हूँ।

प्रो. रामाश्रय अवस्थी लखनऊ, प्रो. आर. के शर्मा जबलपुर प्रो. बी. सी. सिन्हा हरिद्वार, डा. रहमान अली उज्जैन, डॉ. एस. डी. शर्मा ग्वालियर, डा. आर. ए. अग्रवाल मेरठ, डा. नरेशचन्द्र बंसल कासगंज, डा. आम प्रसाद दिल्ली का मैं प्रेरणा, प्रोत्साहन हेतु आभार व्यक्त करता हूं।

सांस्कृतिक कार्य विभाग उ. प्र. के निदेशक श्री अशोक कुमार, संयुक्त निदेशक श्री बी. पी. माथुर, उप निदेशक डा. ए. के. श्रीवास्तव ने मुझे सदैव प्रोत्साहित किया है मैं उनका कृतज्ञ हूँ।

संग्रहालय एवं पुरातत्व विभाग म. प्र. के आयुक्त डा. कल्याण कुमार चक्रवर्ती उप संचालक श्री आर. पी. चौधरी (सेवा निवृत्त) उप संचालक श्री एल.पी. पाण्डेय श्री वी. वी. नगाइच उपसंचालक एवं सहायक अभियन्ता श्री अजयपाल सिंह श्री राजाराम सिंह संग्रहाध्यक्ष भोपाल संग्रहालय एवं श्री आर. के चतुर्वेदी संग्रहाध्यक्ष नगर निगम संग्रहालय ग्वालियर से प्राप्त प्रेरणा एवं प्रोत्साहन हेतु मैं आभार व्यक्त करता हूँ।

डा. राकेश तिवारी निदेशक पुरातत्व संगठन उ. प्र., डा. रामचन्द्र तिवारी निदेशक राजकीय संग्रहालय अलमोड़ा, श्री जे. पी. शुक्ल रजिस्ट्रीकरण अधिकारी मेरठ, श्री रमाशंकर रजिस्ट्रीकरण अधिकारी झांसी, श्रीमती पुष्पा ठकुरैल सहायक निदेशक राजकीय संग्रहालय मथुरा श्री के.डी. मिश्र छाया चित्रकार राजकीय संग्रहालय मथुरा, डा.अम्बिका सिंह प्रभारी पुरातत्व इकाई झाँसी, श्री उमाशंकर वाजपेयी सीतापुर, श्री सुनील अवस्थी गाजियाबाद, श्री नर्मदा प्रसाद यादव झाँसी का मैं आभारी हूँ।

डा. जगदीश प्रसाद अग्निहोत्री प्राचार्य बुन्देल खण्ड महाविद्यालय झाँसी, डा. आनंद प्रकाश द्विवेदी अध्यक्ष संस्कृत विभाग (सेवा निवृत्त) एवं डा- शिवपूजन पाठक अध्यक्ष इतिहास विभाग बुन्देलखण्ड महाविद्यालय झांसी श्री सीताराम गुप्त प्राचार्य लक्ष्मी व्यायाम मन्दिर तथा डा. जी. पी. शुभेश प्राध्यापक विपिन बिहारी इन्टर कालेज झाँसीका कृतज्ञ हूं। झांसी नगर ने अनेक सहृदय नागरिकों की प्रेरणा एवं प्रोत्साहन से यह कार्य सम्भव हुआ मैं उनका ऋणी हूँ। इनमें सर्वश्री ओमप्रकाश बंसल, एस. एन. इण्डस्ट्रीज, श्री द्वारिकेश मिश्र श्रीराम प्रेस, श्री पुरुषोत्तम स्वामी स्वामी ट्रैक्टर्स, श्री सतीशचन्द्र शर्मा साथी एजवर्टाइजर्स, श्रीं रफीक मोहम्मद भारत प्रिन्टर्स श्री मोहन अग्रवाल, श्री जे. एन. त्रिवेदी श्री एस. पी. तिवारी श्री भगवती शरण दास, श्री नफासत उल्लाह श्री आर० के० अग्रवाल को विशेष रूप से हार्दिक धन्यवाद देता हूँ।

विद्वजनों की दृष्टि में यह ग्रन्थ लघु प्रयास हो सकता है किन्तु सरस्वती के देवालय में यह अकिंचन पुष्पार्पित करते हुए मुझे पूर्ण संतोष है।

रुद्रकिशोर पाण्डेय

इ—4 न्यु रॉयगंज, सीपरी झाँसी

विषय सूची

अध्याय–1—इतिवृत्त	स्थिति, नाम, ऐतिहासिक परिपेक्ष्य	1
अध्याय–2—स्थापत्य	स्थापत्यीय विशेषतायें नगर विन्यास–नगरकोट द्वार, खिड़कियां दुर्ग–झांसी दुर्ग प्रासाद—रानीमहल, रघुनाथ महल मन्दिर—क्षेत्र के गुप्त प्रतिहार तथा चन्देल कालीन मन्दिर, महालक्ष्मी मन्दिर, रघुनाथजी का मन्दिर, मुरली मनोहरजी का मन्दिर, गणेश मंदिर, महाकाली मंदिर, कामाक्षा देवी मंदिर, जयेश्वर महादेव मंदिर, शिव मंदिर सैय्यर हनुमंत निवास, मार्कण्डेय मंदिर मस्जिद—नवाब साहब की मस्जिद, मस्जिद अलीगोल खिड़की बाहर मस्जिद नवाब अलीबहादुर गिरजाघर—सिटी चर्च, सेन्ट मॉर्टिन्स चर्च गोसांइयों के स्मारक–-मंदिर दीक्षित बाग का मंदिर पानी की धर्मशाला का शिवालय तथा लक्ष्मीताल का शिव मंदिर समाधि मंदिर राजाओं की छतरियां—राजा रामचन्द्र राव की छतरी, राजा गंगाधर राव की की छतरी सती मन्दिर— मकबरे—गजरा बेगम का मकबरा, अन्य मकबरा कब्रिस्तान—पठानों का कब्रिस्तान ब्रिटिश स्मारक–-स्टार फोर्ट, रेजीडेन्सी, मेमोरियल सिमेन्ट्री, अंग्रेजों का कब्रिस्तान, ग्रेव आफ मेजर एफ 0डब्ल्यू0 पिंकने, रिसाला कब्रिस्तान	35
अध्याय–3–-कला	मूर्तिकला—मूर्तिकला की विशेषतायें, झांसी की महत्वपूर्ण प्रतिमायें चित्रांकन—चित्रकला शैली की विशेषतायें, चित्रांकन तकनीक, चित्रांकन के विषय अस्त्र-शस्त्र—कड़क बिजली, भवानी शंकर;तोप	69
अध्याय–4–-सांस्कृतिकी	झांसी राज्य, वाणिज्य व्यवसाय मुद्रायें, लोकगीत	76

परिशिष्ट

नारोशंकर द्वारा दिये गये दानपत्र की सनद, झांसी राजवंश का वंशवृत्त
महारानी लक्ष्मीबाई जू देवी,
ग्रन्थ सूची।
चित्रमाला।

संकेताक्षर

ई.	=	ईस्वी।
पृ.	=	पृष्ठ।
वॉ	=	वॉल्यूम।
क. स.	=	कलाकृति संख्या।

एचीसन सी यू	=	ए कलेक्शन ऑफ ट्रीटीज ऐंगेजमेंन्ट्स एण्ड सनद्स रिगार्डिंग टु इण्डिया एण्ड नेबरिंग कन्टरीज।
पिंकने एफ. डब्ल्यू	=	नरेटिव ऑफ इवेन्ट्स अटेन्डिग द ऑउट ब्रेक ऑफ डिस्टर्वन्सेस एण्ड द रेस्टोरेशन ऑफ एथोर्टी इन द डिवीजन ऑफ झाँसी इन 1857-58
मिश्रा ए. एस.	=	नाना साहेब एण्ड द फाइट फॉर फ्रीडम।
फॉरेस्ट जी. डब्लू.	=	सिलैक्शन फ्रॉम द लैटर्स डिस्पैचस एण्ड अदर स्टेट पेपर्स प्रिजर्वड इन द मिलट्री डिपार्टमेन्ट गवर्नमेन्ट ऑफ इण्डिया वॉ. फोर्थ।

इतिवृत्त

स्थिति- नाम- ऐतिहासिक परिपेक्ष्य-

यमुना के दक्षिण में सिन्ध, पुष्पावती, दशार्ण तथा कर्णवती के जल से सिंचित विन्ध्याचल की पर्वत श्रृंखलाओं से सुसज्जित भूभाग प्राचीन काल में चेदि महाजनपद के नाम से विख्यात था। कालान्तर में जैजाकभुक्ति एवं वर्तमान में बुन्देलखण्ड के नाम से यह प्रदेश जाना जाता है।

पुष्पावती (पहुज) एवं बेत्रवती (बेतवा) के मध्य स्थित झांसी नगर भारतवर्ष के स्वाभिमान एवं शौर्य का प्रतीक है। बुन्देलों की राजधानी ओरछा स्थित जहांगीर-महल से यहां का दुर्ग झांइसी (छायामात्र) प्रतीत होने के कारण यह झांइसीदुर्ग[1] कहलाने लगा यद्यपि इस स्थल का नाम बलवंतनगर[2] था। झांइसी शब्द का अपभ्रंश झांसी कालान्तर में इस दुर्ग एवं नगर दोनों के लिये प्रयुक्त होने लगा।

झांसी क्षेत्र प्रागैतिहासिक काल से ही मानव का कर्मस्थल रहा है। झांसी के निकट बनगवां से प्राप्त निम्न पुरापाषाण काल[3] के उपकरण इसकी पुष्टि करते हैं। एरच से प्राप्त मृद्‌भाण्डों के टुकड़ों से ज्ञात होताहै कि ताम्रपाषाणकाल में 'काले एवं लाल' प्रकार[4] के मृद्‌भाण्डों का प्रयोग करने वाले मानव इस क्षेत्र में निवास करते थे।

वैदिक युग एवं रामायणकाल में यह क्षेत्र दण्डकारण्य का एक भाग था। आर्यों की चेदिशाखा का निवास होने के कारण विन्ध्य का यह भूभाग चेदि राष्ट्र के नाम से प्रसिद्ध हुआ तथा झांसी क्षेत्र चेदिराष्ट्र के अन्तर्गत था। महाभारत[5] से ज्ञात होता है कि इन्द्रप्रस्थ में राजसूय यज्ञ के अवसर पर चेदि नरेश शिशुपाल उपस्थित हुआ था। पाण्डवों

द्वारा यज्ञ में श्रीकृष्ण की अग्रपूजा करने पर वह क्रोधित हो उठा और अन्त में श्रीकृष्ण द्वारा मारा गया।

ईसापूर्व छठवीं शताब्दी में चेदि, भारत के प्रसिद्ध सोलह महाजनपदों[6] में से एक और वितिहोत्रवंश[7] के द्वारा शासित था। ईसापूर्व छठवीं शताब्दी के मध्य में अवन्ति के विस्तारवादी शासक चण्ड प्रद्योत ने चेदि महाजनपद को अपने राज्य में मिला लिया। ईसापूर्व चौथी शताब्दी में अवन्ति के साथ चेदि भी मगध साम्राज्य में विलीन हो गया।

महान राजनीतिज्ञ चाणक्य की सहायता से चन्द्रगुप्त मौर्य नन्दवंश का विनाशकर के मगध के सिंहासन पर विराजमान हुआ। अपने पिता चन्द्रगुप्त के पश्चात बिन्दुसार मगध सम्राट बना, इसके काल में झांसी क्षेत्र अवन्ति प्रान्त का एक हिस्सा था। अवन्ति की राजधानी उज्जयिनी थी और राजपुत्र अशोक इस प्रान्त का प्रशासक[8] था। बिन्दुसार के पश्चात अशोक ने सिंहासन पर आधिपत्य स्थापित किया। अशोक ने बौद्ध धर्म से प्रभावित होकर उच्च आदर्शों एवं जन कल्याणकारी नीतियों के प्रसार हेतु अपने साम्राज्य में स्थान स्थान पर शिलालेख एवं स्तम्भलेख स्थापित करवाये। झांसी के समीप गुजर्रा में अशोक द्वारा स्थापित शिलालेख[9] अत्यन्त महत्वपूर्ण है। इसमें उसकी उपाधि "देवानंप्रिय प्रियदर्शी" के साथ उसका नाम "अशोक" भी उत्कीर्ण है। जबकि अन्य अभिलेखों में उसकी उपाधिमात्र अंकित है। एरच से प्राप्त रजत एवं ताम्र आहत् मुद्राओं पर नन्द एवं मौर्यकालीन चिह्न अंकित हैं। एरच, चिरगांव[10] से उत्तरी कृष्ण मार्जित मृद् भाण्डों के टुकड़े प्राप्त हुए हैं। यह अभिलेख एवं मुद्रायें नन्द-मौर्यकाल में इस क्षेत्र के बढ़ते हुये राजनैतिक सांस्कृतिक महत्व के सूचक हैं।

ईसापूर्व द्वितीय शताब्दी में पुष्यमित्र शुंग ने मौर्यवंश का अंत कर मगध के सिंहासन पर अधिकार कर लिया। अग्निमित्र ने विदिशा को अपनी प्रान्तीय राजधानी बनाया। इसी काल का मुगमुख[11] नामांकित सिक्का एरच से प्राप्त हुआ है जो इस मान्यता को खण्डित करता है कि ईसापूर्व द्वितीय शताब्दी में बुन्देलखण्ड विदिशा से शासित था, इससे स्पष्ट होता है कि यह क्षेत्र ईसापूर्व द्वितीय शताब्दी में विदिशा के अंतर्गत नहीं था अपितु कौशाम्बी, अहिक्षत्रा, मथुरा, अयोध्या तथा विदिशा के सदृश स्वतन्त्र राज्य था। एरच से ही ईसापूर्व प्रथम शताब्दी का ब्राह्मीलिपि में इष्टिका अभिलेख भी प्राप्त

हुआ है इसमें "रञो बंधिकश दामसितस पोंडरीक" अंकित[12] है, यह अभिलेख दाममित्र के इस क्षेत्र के राजा होने की सूचना देता है।

प्रथम शताब्दी ईसवी के राजा आदितमित्र का सिक्का भी एरच से प्राप्त हुआ है। इसके अतिरिक्त एरच से प्राप्त तीन पंक्तियों के इष्टिका अभिलेख में तीन राजाओं शतानीक, मूल तथा आषाढ़ के नाम आये हैं। इस अभिलेख से ज्ञात होता है कि मूल दशार्णाधिपति एवं सेनापति था तथा वाशिष्ठीपुत्र आषाढ़ दशार्णेश्वर था। इसमें इस क्षेत्र का नाम दशार्ण अंकित है। एरच से प्राप्त सिक्कों-इष्टिका अभिलेखों से इस क्षेत्र पर ईसापूर्व द्वितीय शताब्दी से प्रथम शताब्दी ईस्वी तक शासन करने वाले छः राजाओं के विषय में जानकारी प्राप्त होती है जिनके विषय में अन्य किसी स्रोत से ज्ञान[13] प्राप्त नहीं होता।

झांसी क्षेत्र की पदमावती से भौगोलिक निकटता के कारण शीघ्र ही इस क्षेत्र पर नाग वंश के राजाओं का शासन स्थापित हो गया। नाग शिवोपासक थे इनकी ताम्र मुद्राओं पर नन्दी, परशु, त्रिशूल चक्र के अतिरिक्त राजाओं के नाम भी अंकित मिलते हैं। एरच तथा बड़ागांव से प्राप्त नाग मुद्रायें प्रमाणित करती हैं कि झांसी क्षेत्र नागों के अधिकार में था।

चौथी शताब्दी के मध्य समुद्रगुप्त की दिग्विजय के फलस्वरूप यह क्षेत्र गुप्त साम्राज्य का अंग बन गया। झांसी बरुवासागर मार्ग पर बेतवा किनारे पहाड़ी पर बना लघु मंदिर इस क्षेत्र में हुये गुप्तकालीन सांस्कृतिक विकास का प्रतीक है। इसकी सपाट छत पर कमल[14] बना है।

छठवीं शताब्दी के प्रथम चरण में हूण नरेश मिहिरकुल[15] ने एरण से ग्वालियर तक के विशाल भूभाग को अपने साम्राज्य में मिला लिया था। इस प्रकार इसके मध्य स्थित झाँसी क्षेत्र हूण राज्य का अंग बन गया। मालवा के स्वतन्त्र शासक यशोधर्मन[16] ने शीघ्र ही मिहिरकुल को पराजित कर इस क्षेत्र को हूणों से मुक्त कर दिया।

चीनी यात्री ह्वेनसांग[17] की यात्रा के समय ग्वालियर, मालवा तथा इस भूभाग चि चि टो (बुन्देलखण्ड) पर ब्राह्मण राजा राज्य कर रहे थे। सम्भवतः ये राजा

सम्राट हर्षवर्धन के सामन्त थे। उज्जैन के प्रतिहार नरेश नागभट द्वितीय (लगभग 800 ई० – 833 ई०) ने कन्नौज[18] पर अधिकार कर उसे अपनी राजधानी बनाया। इस विजय अभियान के फलस्वरूप झांसी क्षेत्र अपने आसपास के अन्य भूभागों की भांति प्रतिहार साम्राज्य में विलीन हो गया। नागभट द्वितीय के पौत्र मिहिरभोज का अभिलेख देवगढ़[19] से प्राप्त हुआ है इसकी तिथि 862 ई० है। मिहिरभोज के पुत्र महेन्द्रपाल प्रथम (लगभग 885 ई० – 915 ई०) के आधिपत्य में यह क्षेत्र था इसकी पुष्टि सीयदोणी (ललितपुर जनपद का सीरोनखुर्द) से प्राप्त 907 ई० के अभिलेख[20] से होती है। सीय-दोणी प्रतिहार काल में इस क्षेत्र की प्रान्तीय राजधानी था। पठारी, गरियागांव[21] से प्राप्त कलाकृतियां तथा झांसी–बरुवासागर मार्ग पर स्थित जराय मठ[22] झांसी क्षेत्र में हुयी प्रतिहारकालीन सांस्कृतिक धार्मिक गतिविधियों के परिचायक हैं।

चन्देल वंश का संस्थापक राजा नन्नुक (लगभग 831 ई० – 845 ई०) प्रतिहार नरेश नागभट द्वितीय का सामन्त[23] था। नन्नुक के पश्चात वाक्पति राजा बना। वाक्पति के पश्चात क्रमशः उसके दो पुत्र जयशक्ति एवं विजयशक्ति चन्देल सिंहासन पर विराजमान हुये। जयशक्ति के नाम पर उसका राज्य जैजाकभुक्ति कहलाने लगा। विजय शक्ति के पश्चात् उसका पुत्र राहिल एवं पौत्र हर्ष चन्देलों के राजा हुये।

प्रतिहार नरेश महिपाल प्रथम (लगभग 912 ई० – 943 ई०) के काल में राष्ट्रकूट राजा इन्द्र तृतीय ने भोपाल–झांसी–कालपी मार्ग से बढ़कर प्रतिहार राजधानी कन्नौज पर अधिकार कर लिया। प्रतिहार नरेश को उसके सामन्त चन्देल हर्ष ने इस संकट से मुक्त कर पुनः सिंहासन[24] पर प्रतिष्ठित किया। यह घटना प्रतिहारों की निर्बलता एवं चन्देलों के अभ्युदय की सूचक है। हर्ष के पुत्र यशोवर्मन (लगभग 930 ई० – 950 ई०) ने अनेक सफल सैनिक अभियानों द्वारा चन्देलों की स्वतन्त्र सत्ता स्थापित की। यशोवर्मन के पुत्र धंग (लगभग 950 ई० – 1102 ई०) के खजुराहो के लक्ष्मण मन्दिर से प्राप्त अभिलेख[25] (विक्रम सम्वत् 1011 = 954 ईसवी) से ज्ञात होता है कि उसके सिंहासनारूढ़ होने के समय चन्देल राजशक्ति कालिंजर, भास्वत्, गोपाभिधानगिरि एवं कालिन्दी तट तक व्याप्त थी। इस प्रकार भास्वत् (विदिशा), गोपाभिधानगिरि (ग्वालियर) तथा यमुना नदी के मध्य स्थित झांसी क्षेत्र चन्देल साम्राज्य का अंग था।

झांसी दुर्ग में स्थान स्थान पर चन्देलकालीन स्मारकों के स्थापत्यीय खण्डों को पुनः प्रयुक्त किया गया है । इस दुर्ग से प्राप्त बारहवीं शताब्दी ई० के अभिलेख[26] में चन्देल नरेश कीर्तिवर्मन का नाम आया है । झांसी के रघुनाथ महल के परिसर से कुये की खुदायी में सती स्तम्भ[27] प्राप्त हुआ है, ये वस्तुयें इंगित करती हैं कि बलवंत नगर के रूप में झांसी की स्थापना चन्देल काल में हो चुकी थी । इस स्थल के प्राचीन नाम (बलवंत नगर) के साथ नगर शब्द का जुड़ा होना इसके महत्व को दर्शाता है । निश्चित ही यहां चन्देल काल में स्थानीय प्रशासक का निवास था प्राप्त सती स्तम्भ उच्च सामन्तीय परम्परा का द्योतक है। बलवंत नगर के इर्द गिर्द खैलार[28] राजापुर[29] लहर[30] एवं बड़ागांव[31] से प्राप्त पुरावशेष प्रमाणित करते हैं कि इन स्थलों पर चन्देलकाल में विकसित बस्तियां थीं ।

चन्देल नरेश विद्याधर पर महमूद गजनवी ने 1020 ई० एवं 1022 ई० में दो आक्रमण किये परन्तु चन्देल शक्ति अक्षुण्य बनी रही । इन आक्रमणों के फलस्वरूप इस क्षेत्र के प्रतिहार चन्देलकालीन स्मारक नष्ट हो गये । मदनपुर अभिलेख (1182 ई०) से ज्ञात होता है कि चहमान राजा पृथ्वीराज तृतीय[32] ने जैजाकभुक्ति पर आक्रमण कर महोबा पर अधिकार कर लिया था । महोबा अभिलेख[33] (1183 ई०) से ज्ञात होता है कि चन्देलों के अधिकार में महोबा शीघ् ही आ गया था । चन्देल नरेश परमर्दिन को कालिंजर अभिलेख[34] (1201 ई०) में 'दशार्णाधिनाथ' कहा गया है इससे प्रतीत होता है कि इस तिथि तक वह अपने खोये हुए समस्त प्रदेश चहमानों से पुनः प्राप्त कर चुका था । इस प्रकार झांसी क्षेत्र पर चहमानों का अल्पकालीन आधिपत्य रहा जिन्हें चन्देलों ने शीघ्र ही इस प्रदेश से मार भगाया । मोहम्मद गोरी ने चहमान नरेश पृथ्वीराज तृतीय का 1192 ई० में तथा गहड़वाल नरेश जयचन्द का 1193–94 ई० में अंत कर दिया । इसके पश्चात् उसने अन्य राज्यों पर आक्रमण करने की योजना बनायी। कुतुबुद्दीन ऐबक एवं इल्तुमिश के नेतृत्व[35] में एक विशाल सेना ने 1202 ई० में चन्देलों पर आक्रमण कर दिया । इसी समय चन्देल नरेश परमर्दिन की मृत्यु हो गयी उसके मंत्री अजदेव ने संघर्ष जारी रखा । चन्देल वीरतापूर्वक लड़े परन्तु कालिंजर–दुर्ग में पानी की कमी हो जाने के कारण वे पराजित हो गये । परमर्दिन के पुत्र त्रैलोक्यवर्मन ने शीघ्र ही तुर्कों को पराजित कर अपने राज्य पर पुनः अधिकार कर लिया गर्रा दानपत्र[36] इसकी पुष्टि करता है।

झांसी अभिलेख37 में त्रैलोक्यवर्मन के पुत्र वीरवर्मन का नाम अंकित है इससे स्पष्ट होता है कि वीरवर्मन का प्रतीकात्मक अधिकार इस क्षेत्र पर था, क्योंकि खंगारों के रूप में एक स्थानीय शक्ति ने इस क्षेत्र में अपना राज्य स्थापित कर लिया था।

खंगार राजवंश के संस्थापक राजा खेतसिंह ने पहुज, बेतवा तथा धसान नदियों के मध्य स्थित विशाल भूभाग पर अपना आधिपत्य स्थापित कर गढ़कुण्डार को अपनी राजधानी बनाया। इसप्रकार झांसी क्षेत्र पर खंगार शासन स्थापित हो गया। खेतसिंह के पश्चात् क्रमश: खूबसिंह तथा छत्रसालसिंह राजा हुये दिल्ली सुल्तान मुहम्मद तुगलक के आक्रमण के फलस्वरूप खंगार नरेश मानसिंह मारा गया, यद्यपि खंगारों ने वीरता पूर्वक शत्रु का सामना किया था। पुरुषों के मारे जाने के पश्चात वीर नारियों ने विशद् परिमाण में जौहर38 कर अपने धर्म एवं सतीत्व की रक्षा की।

खंगारों के पश्चात इस क्षेत्र पर बुन्देला सत्ता स्थापित हो गयी और कालान्तर में जैजाकभुक्ति बुन्देलखण्ड कहलाने लगा। प्रारम्भिक बुन्देला शासकों ने गढ़कुण्डार से ही शासन किया। बुन्देला राजा रुद्रप्रताप ने विक्रम सम्वत् 1588 की वैसाख सुदी तेरस (1531 ई०) को सुरम्य बेतवा तट पर महल निर्माण करवाकर ओरछा नगर की स्थापना39 की। रुद्रप्रताप के पुत्र भारतीचन्द्र ने 1539 ई० में गढ़कुण्डार से हटाकर ओरछा को अपनी राजधानी40 बनाया।

ओरछा के बुन्देला राजा मधुकर शाह41 की मृत्यु 1592 ई० में हुयी। उसका ज्येष्ठ पुत्र रामशाह ओरछा के सिंहासन पर बैठा अन्य राजपुत्रों को जागीरें प्राप्त हुयी। रामशाह के भाई वीरसिंह को बड़ौनी की जागीर प्राप्त हुयी। वीरसिंह महत्वकांक्षी राजनीतिज्ञ एवं बीर योद्धा था। मुगल शहजादे सलीम के अनुरोध पर वीरसिंह ने 12 अगस्त 1602 ई० को बादशाह अकबर के प्रसिद्ध दरबारी अबुलफजल का वध कर दिया। दुख एवं क्रोध से उत्तेजित अकबर ने वीरसिंह को पकड़ने हेतु सेना भेजी परन्तु वह अपने उद्देश्य में असफल रहा।

13 अक्टूबर 1605 ई० को अकबर की मृत्यु हो गयी जहांगीर (सलीम) बादशाह बना। अपने पूर्व मैत्रीपूर्ण सम्बन्धों के आधार पर जहांगीर ने वीरसिंह को ओरछा

राज्य प्राप्त करने में सहायता दी, 1606 में रामशाह को ओरछा राज्य के स्थान पर चन्देरी बानपुर की जागीर[42] प्रदान की गयी।

महाराजा वीरसिंह जू देव कुशल प्रशासक थे उनका राज्य 81 परगनों में विभक्त था इसमें 125000 ग्राम थे। राज्य का राजस्व 2 करोड़ रुपये था। महाराजा वीरसिंह जू देव तीर्थयात्रा हेतु 1614 ई० में मथुरा गये, वहां उन्होंने 81 मन स्वर्ण का तुलादान किया था। इनका काल बुन्देला संस्कृति, कला एवं स्थापत्य का स्वर्णयुग था। वीरसिंह जू देव ने अपने राज्य के विभिन्न स्थलों पर विक्रम सम्वत् 1675 की माघ सुदी पंचमी को बावन भवनों की नींव[43] डलवायी थी। राजधानी ओरछा स्थित जहांगीर महल, चतुर्भुज मंदिर, फूलबाग़ तथा दतिया के महल (पुराना महल) का निर्माण वीरसिंह जू देव ने ही करवाया था। इसी संदर्भ में राजधानी ओरछा से मात्र 10 किलोमीटर (पुराने मार्ग से) दूर स्थित जैजाक भुक्ति के प्राचीन शहर बलवंत नगर के खण्डहरों के मध्य बंगरा पहाड़ी पर दुर्ग शैली के मौजमहल[44] का निर्माण करवाया था। ओरछा के अत्यधिक निकट होने के कारण मौजमहल का उपयोग राजधानी की सुरक्षा चौकी के रूप में भी किया जाता था। ओरछा के जहांगीर महल से झांइसी (छाया मात्र) दिखने के कारण इसे झांइसी महल भी कहा जाता था।

पन्ना नरेश महाराजा छत्रसाल बुन्देला एक प्रतापी शासक और वीर योद्धा थे। इलाहबाद के मुग़ल सूबेदार मोहम्मद खान बंगश ने उनके राज्य पर 1729 ई० में भीषण आक्रमण कर दिया। वृद्धावस्था के कारण महाराजा छत्रसाल अपने को असहाय अनुभव कर रहे थे अतः उन्होंने इस अवसर पर मराठों से सहायता प्राप्त की। महाराजा छत्रसाल के अनुरोध पर पेशवा बाजीराव प्रथम ने बंगश को परास्त[45] कर बुन्देलखण्ड से खदेड़ दिया। कृतज्ञ छत्रसाल ने मराठा पेशवा बाजीराव प्रथम को अपने राज्य का कुछ भाग उपहार स्वरूप प्रदान किया। इस प्रकार बुन्देलखण्ड में मराठों का प्रवेश हो गया।

मराठा अत्यंत महात्वाकांक्षी थे, मराठा राज्य के विस्तार हेतु मल्हार राव होल्कर ने 1735 ई० में बुन्देलखण्ड पर आक्रमण किया, परन्तु ओरछा एवं दतिया राज्य की सम्मिलित सेनाओं ने मराठों को पराजित कर दिया। बुन्देलों और मराठों के इस भीषण संघर्ष के फलस्वरूप इस क्षेत्र में अव्यवस्था फैल गयी और झांसी के किलेदार[46]

इन्द्रगिरि गोसांई ने मोंठ में अपने लिये एक छोटा सा राज्य स्थापित कर लिया। इससे स्पष्ट होता है कि बुन्देला शासन में झांसी को महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त था तथा गोसांई यहां के प्रशासक थे।

मराठे अपने राज्य के विस्तार के अतिरिक्त अन्य राज्यों से चौथ (कर) वसूल करते थे। इसी संदर्भ में ज्योतिबा सिन्धिया और मल्हार कृष्ण के नेतृत्व में आयी हुयी मराठा सैनिक टुकड़ी को उनके नायकों सहित ओरछा नरेश पृथ्वीसिंह ने मरवा डाला। क्रोधित मराठों ने नारोशंकर के नेतृत्व में **1742** ई० में ओरछा पर आक्रमण[47] कर दिया। अपने अभियान में मराठे सफल हुये राजा पृथ्वीसिंह को बन्दी बनाकर झांसी दुर्ग में ले आये। अंत में मराठों एवं बुन्देलों के मध्य समझौता हुआ, इसके फलस्वरूप झांसी, बरूवासागर तथा मऊरानीपुर के क्षेत्र[48] मराठों को प्राप्त हुये। इस प्रकार दतिया एवं ओरछा के महत्वपूर्ण बुन्देला राज्यों के मध्य मराठा राज्य स्थापित हो गया।

बुन्देला राजधानी ओरछा से मात्र **10** किलोमीटर दूर (पुराने मार्ग से) मराठा राज्य स्थापित हो गया था अतः महाराजा विक्रमजीतसिंह (1776 ई० 1817 ई०) ने **1783** ई० में ओरछा से राजधानी हटाकर टेहरी (टीकमगढ़) में स्थापित की।

झांसी को इस नवीन मराठा राज्य की राजधानी बनाया गया। नारोशंकर की महत्पूर्ण भूमिका को ध्यान में रखते हुये पेशवा ने उन्हें यहां का सूबेदार नियुक्त किया। नारोशंकर झांसी राज्य का संस्थापक था। उसने सामरिक महत्व के झांसी दुर्ग का विस्तार किया, नारोशंकर द्वारा निर्मित भाग शंकरगढ़ कहलाता है। समीप की बस्ती को नियोजित कर नगर का स्वरूप प्रदान किया एवं सुरक्षा हेतु इसके चारों ओर नगरकोट का निर्माण करवाया। नगर नियोजन के अतिरिक्त उसने दतिया राज्य से दबोह परगना[49] छीनकर झांसी राज्य का विस्तार किया। नारोशंकर ने झांसी को मराठा बस्ती में परिवर्तित करने के साथ ही साथ गोसांइयों को भी भूमिदान तथा अन्य सुविधायें देकर संतुष्ट किया। पन्द्रह वर्षों के शासनकाल में नारोशंकर ने झाँसी को सुदृढ़ शक्ति सम्पन्न मराठा राज्य बना दिया। पेशवा ने **1757** ई० में नारोशंकर को वापिस बुला लिया इसके पश्चात् माधव गोबिन्द काकिर्डे तथा बाबूलाल कन्हायी क्रमशः झांसी के

सूबेदार बनाये गये पेशवा ने 1761 ई० में नारोशंकर को पुनः झांसी का सूबेदार बनाया इसी वर्ष बुन्देला सरदारों ने झांसी के आस पास की मराठा चौकियों पर अधिकार[50] कर लिया था।

अवध का नवाब शुजाउद्दौला बुरहन उल मुल्क इलाहबाद का मुगल सूबेदार होने के कारण बुन्देलखण्ड को अपने राज्य का अंग मानता था। इसी आधार पर उसने सिद्दी वशीरखान के सेनापतित्व में एक सेना भेजकर मोंठ पर अधिकार[51] कर लिया। गणेश सम्भाजी नामक मराठा नायक मराठों से विश्वासघात करके मुगलों से मिल गया था इन परिस्थितियों में अवध की सेना 31 जनवरी 1762 ई० को झांसी पर अधिकार करने में सफल हो गयी। अवध के नवाब ने मोहम्मद वशीर को झांसी का फौजदार नियुक्त किया गणेश सम्भाजी भी झांसी में अधिकारी बनाया गया। शीघ्र ही 1766 ई० में मराठा योद्धा मल्हार राव होल्कर ने झांसी पर अधिकार कर मराठों के इस नवीन राज्य का जीर्णोद्धार किया।

नारोशंकर की मृत्योपरान्त उनके भ्रातृज विश्वास राव लक्ष्मण को झांसी का सूबेदार बनाया गया उन्होंने 1766 ई० से 1769 ई० तक प्रशासन किया। इसके पश्चात् रघुनाथ राव (द्वितीय) नेवालकर सूबेदार नियुक्त हुये, इनके काल में एक बार पुनः अवध के नवाब शुजाउद्दौला बुरहन-उल-मुल्क ने मीर नईम के नेतृत्व में एक सेना झांसी हस्तगत करने हेतु भेजी। मराठों ने इस सेना को झांसी के समीप ही परास्त[52] कर दिया। शीघ्र ही अवध के नवाब ने अनूप गिरि गोसांई के नेतृत्व में पुनः एक विशाल सेना भेजी। इस सेना ने यमुना पार कर मराठों के थानों पर अधिकार करना प्रारम्भ कर दिया। झांसी के सूबेदार रघुनाथराव (द्वितीय) ने पूना दरबार से सैन्य सहायता की याचना की परन्तु असफल रहा। उसने मध्यभारत स्थित तालमेर के मराठा शासक से सहायता प्राप्त की परन्तु जनवरी 1775 ई० में नवाब की मृत्यु[53] के साथ ही झांसी अवध से आने वाले संकटों से सदैव के लिये मुक्त हो गया।

रघुनाथराव (द्वितीय) कुशल प्रशासक था उसने राजस्व को व्यवस्थित किया वाणिज्य व्यवसाय का विकास कर राज्य की आय में बृद्धि की उसने नेवालकर वंश की

"कुल देवी" महालक्ष्मी के मन्दिर के अतिरिक्त रघुनाथ जी के मन्दिर का भी निर्माण करवाया था। अपने निवासहेतु रघुनाथराव (द्वितीय) ने नगर में एक महल (रानीमहल) भी निर्मित करवाया, अपने भाई शिवराव हरी के पक्ष में अपना पद त्यागकर 1796 ई० में रघुनाथराव (द्वितीय) धार्मिक जीवन व्यतीत करने बनारस चला गया।

31 दिसम्बर 1802 ई० में वेसीन में ईस्ट इण्डिया कम्पनी एवं पेशवा बाजीराव द्वितीय के मध्य सन्धि हुई, इसकी पूरक सन्धि पर 16 दिसम्बर 1803 ई० में पूना में हस्ताक्षर हुये। इस सन्धि के फलस्वरूप ईस्ट इण्डिया कम्पनी को पेशवा के राजनैतिक उत्तराधिकारी के रूप में मराठा साम्राज्य के शासन सूत्र प्राप्त हो गये।

झांसी का सूबेदार पेशवा का प्रतिनिधि था इसी आधार पर शिबराव हरी ने 1803 ई० एवं 1804 ई० में ईस्ट इण्डिया कम्पनी[54] से सन्धियां कीं। इन सन्धियों के फलस्वरूप सूबेदार को कम्पनी सरकार से मान्यता तथा सहायता का आश्वासन प्राप्त हुआ। झांसी का सूबेदार कम्पनी की सेनाओं की सहायता हेतु भी सहमत हो गया।

शिवराव हरी 1814 ई० में स्वर्गवासी हो गया। उसकी इच्छा के अनुरूप उसका अवयस्क पौत्र रामचन्द्रराव सूबेदार बनाया गया। रामचन्द्रराव कृष्णराव का पुत्र था, कृष्णराव अपने पिता शिवराव हरी के जीवनकाल में ही स्वर्गवासी हो गया था। पेशवा बाजीराव द्वितीय एवं ईस्ट इण्डिया कम्पनी के मध्य 13 जून 1817 ई० में समझौता हुआ इसके फलस्वरूप बुन्देलखण्ड[55] में पेशवा के समस्त अधिकार ईस्ट इण्डिया कम्पनी को प्राप्त हो गये। इन नवीन परिस्थितियों में 17 नवम्बर 1817 को रामचन्द्रराव ने कम्पनी सरकार से सन्धि की। इस सन्धि के फलस्वरूप रामचन्द्रराव उसके पुत्र एवं वारिसों को वंशानुगत[56] रूप से झांसी राज्य का स्वामी स्वीकार किया गया। सूबेदार रामचन्द्रराव ने विभिन्न अवसरों पर कम्पनी की आर्थिक सहायता की थी, इन सेवाओं को ध्यान में रखते हुये 1822 ई० में कम्पनी सरकार ने उसे राजा की उपाधि प्रदान की। राजा रामचन्द्रराव 1825 ई० में कम्पनी को 74000 रुपये वार्षिक कर देने एवं अंग्रेजी सेना का एक रिसाला अपने यहां रखने तथा उसका खर्च उठाने के लिए भी सहमत हो गया। लार्ड विलियम वेन्टिक के 1832 ई० में झांसी आगमन के अवसर पर राजा

रामचन्द्रराव को "महाराजाधिराज फिदवी बादशाह जाम शाह इंग्लिस्तान" की उपाधि[57] प्रदान की गयी। राजा को ब्रिटिश राष्ट्र ध्वज अपने राज्य के ध्वज के समान प्रयोग करने का अधिकार भी प्राप्त हुआ। राजा रामचन्द्रराव के सम्बन्ध अंग्रेजों से अत्यंत मधुर थे परन्तु वह एक अयोग्य शासक था 1832 ई० में राज्य की आय 18 लाख रुपयों से घटकर 12 लाख रुपये[58] रह गयी। इसी वर्ष पहुज किनारे बसे हुये उदगांव, नौनेर तथा जिगना के पवांर राजपूतों ने पिछोर, करैरा तथा झांसी परगनों के अनेक ग्रामों को जलाकर लूटमार की।

1835 ई० में राजा रामचन्द्रराव की मृत्यु हो गयी। राजा नि:संतान था अत: उसकी रानी ने अपने ननद के पुत्र कृष्णराव चान्दोरकर (सागर के सूबेदार वंश के) को अपना दत्तक पुत्र बनाया। कृष्णराव, नारायणराव (मृत राजा के वंश का ही एक व्यक्ति) तथा शिवराव हरी के दो पुत्रों रघुनाथराव एवं गंगाधरराव ने राजा बनने हेतु अपने अपने दावे प्रस्तुत किये। कम्पनी सरकार ने शिवराव हरी के दोनों जीवित पुत्रों में बड़े रघुनाथराव (तृतीय)[59] को झांसी का राजा मनोनीत किया।

रघुनाथराव (तृतीय) कुष्ठरोगी तथा दुर्व्यसनी था। उसके काल में प्रशासन अस्त व्यस्त था। राजस्व मात्र तीन लाख रुपये[60] रह गया। राज्य की आय कम थी परन्तु राजा धन के अपव्यय में व्यस्त था, राग रंग में मग्न रहता था इसके परिणाम स्वरूप वह अपने राज्य के कुछ गांव ओरछा एवं ग्वालियर राज्यों के यहां बन्धक रखने को मजबूर हो गया। राजा रघुनाथराव तीन वर्ष राज्य कर 1838 ई० में स्वर्गवासी हो गया।

राजा रघुनाथराव तृतीय के वैध पुत्र न था अत: झांसी राज्य के उत्तराधिकारी का प्रश्न एक बार पुन: उत्पन्न हो गया। रघुनाथराव तृतीय के (उसकी प्रियतमा गजरा से उत्पन्न) अवैध पुत्र अलीबहादुर, पूर्व राजा रामचन्द्रराव के दत्तक पुत्र कृष्णराव, मृतक राजा रघुनाथराव तृतीय की पत्नी जानकीबाई तथा शिवराव हरी के एकमात्र जीवित पुत्र गंगाधरराव ने झांसी की गद्दी पर अपना दावा प्रस्तुत किया।

कम्पनी सरकार ने गंगाधर राव को झांसी का राजा स्वीकार किया। स्वर्गीय राजा रामचन्द्र राव की माता सक्खूबाई ने इस निर्णय का विरोध करते हुये झांसी दुर्ग का

घेरा डाल दिया। सैनिक प्रदर्शन के पश्चात् ही रानी सक्खूबाई ने अपना अभियान समाप्त किया। रानी सक्खूबाई, रानी जानकीबाई (राजा रघुनाथ राव तृतीय की विधवा) को एक एक हजार रुपये तथा अली बहादुर (राजा रघुनाथ राव तृतीय के अवैध पुत्र) को पांच हजार रुपये मासिक का अनुदान जीवन पर्यन्त स्वीकृत61 किया गया।

झांसी राज्य की आर्थिक स्थिति राजा रघुनाथ राव तृतीय के कुशासन से अत्यंत बिगड़ गयी थी अतः कम्पनी सरकार ने कैप्टन रॉस को राज्य का प्रशासक नियुक्त किया। राजा गंगाधर राव को 1843 ई० में राज्य के समस्त अधिकार प्राप्त हो गये। गंगाधर राव कुशल प्रशासक थे वे दयालु एवं उदार स्वभाव के थे। उनके द्वारा प्रशासन में पर्याप्त सुधार किये गये इसके फलस्वरूप राजस्व में वृद्धि हुई। राजा गंगाधर राव जनकल्याण के कार्यों में रूचि लेते थे अतः प्रजा सुखी थी।

1842 ई० में राजा गंगाधर राव का परिणय मणिकर्णिका के साथ हुआ, इनकी पहली पत्नि रमाबाई का निधन पूर्व ही हो चुका था। विवाहोपरान्त मणिकर्णिका का नया नाम लक्ष्मीबाई हुआ।

मणिकर्णिका का जन्म वाराणसी में अस्सी मुहल्ले में हुआ था, इनके पिता मोरोपन्त ताम्बे, पेशवा के भाई चिमनाजी अप्पा की सेवा में कर्मचारी थे। मणिकर्णिका के जन्म के बाद ही इनकी माता भगीरथी बाई का निधन हो गया था, इनके जन्म की निश्चित तिथि ज्ञात नहीं है। इतिहासकार पारसनीस 62 के अनुसार लक्ष्मीबाई का जन्म कार्तिक वदी चौदस विक्रम सम्वत् 1891 (16 नवम्बर 1835) को हुआ था। आगे वह लिखता है कि मोरोपन्त ताम्बे जब बिठूर गये उस समय उनकी पुत्री चार वर्ष की थी। यह सुनिश्चित है कि 1832 ई० में चिमना जी की मृत्यु हो जाने पर ही मोरोपंत ताम्बे पेशवा बाजीराव द्वितीय के आश्रय में बिठूर पहुंचे थे, इससे स्पष्ट होता है कि मणिकर्णिका का जन्म 1827 ई० में हुआ था 63 अथवा इसके एक आधा वर्ष आगे पीछे। परिपक्व हो जाने पर ही 1842 ई० में उनका विवाह किया गया था। प्रथम स्वातंत्र्य युद्ध के अवसर पर उनकी आयु लगभग तीस वर्ष थी।

बिठूर में मणिकर्णिका को पेशवा के पुत्रों नाना साहब, राव साहब के अतिरिक्त

तात्या टोपे का साथ मिला। बिठूर में ही उन्होंने विभिन्न अस्त्र शस्त्रों का अभ्यास, व्यायाम तथा अश्वारोहण भी सीखा साथ ही अध्ययन करके विदुषी बन गयीं। मणिकर्णिका के झांसी की रानी बन जाने के पश्चात मोरोपंत ताम्बे को झांसी राज्य के सरदार का पद तथा जीवन यापन हेतु तीन सौ रुपये मासिक का अनुदान 64 शासन की ओर से स्वीकृत किया गया।

1851 ई० में रानी लक्ष्मीबाई ने पुत्र को जन्म दिया। झांसी के राजा एवं प्रजा आनन्दोत्सव में मग्न हो गये। तीन माह पश्चात् ही नव जात शिशु की मृत्यु 65 हो गयी। पुत्र शोक से राजा गंगाधर राव को गहरा आघात लगा, वे अस्वस्थ हो गये और फिर कभी स्वस्थ न हो सके।

अन्त में राजा ने अपने ही वंश के एक वर्षीय बालक आनन्द राव को दत्तक पुत्र बनाया। दत्तक संस्कार के अवसर पर बालक का नाम दामोदर राव रखा गया। दत्तक संस्कार के पूर्व इस सम्बन्ध में कम्पनी सरकार को सूचित कर दिया गया था। असिस्टेन्ट पॉलिटिकल एजेन्ट मेजर एलिस तथा झांसी स्थित सिन्धिया की कॉन्टीजेन्ट फोर्स का नायक मेजर मॉर्टिन दत्तक संस्कार के अवसर पर उपस्थित थे। दिनांक 19 नवम्बर 18–53 ई० का पत्र जो मेजर एलिस को सम्बोधित था, वह मेजर एलिस एवं मेजर मॉर्टिन के समक्ष पढ़ा गया था। इस पत्र में राजा गंगाधर राव ने कम्पनी सरकार को सूचित किया था कि आनन्द राव को मैंने अपना पुत्र स्वीकार किया है सरकार इस बालक का पक्ष ले तथा रानी को इसकी माता एवं संरक्षक 66 माना जाये। राजा गंगाधर राव दीर्घकाल से अस्वस्थ थे अतः 21 नवम्बर 1853 ई० को स्वर्गवासी 67 हो गये। कम्पनी सरकार के अग्रिम आदेश के आने की प्रतीक्षा करते हुये पॉलिटिकल एजेन्ट ने झांसी राज्य का प्रभार ग्रहण कर लिया।

असिस्टेन्ट पॉलिटिकल एजेन्ट मेजर एलिस दामोदर राव को राजा गंगाधर राव के दत्तक पुत्र एवं राज्य के उत्तराधिकारी के रूप में मान्यता प्रदान करने के पक्ष में था परन्तु पॉलिटिकल एजेन्ट मेजर मलकॉम का मत इसके विपरीत था। यद्यपि मेजर मलकॉम पूर्ण सहमत था कि "झांसी राज्य का प्रभार ग्रहण करने में रानी पूर्णतः सक्षम है" तथापि अंग्रजी राज्य के हितों को सर्वोपरि मानते हुए (लार्ड

डलहौजी की देशी राज्यों को किसी भी प्रकार से हड़पने की नीति के अनुरूप) उसने झांसी के अंग्रेजी राज्य में विलय की अनुशंसा [68] करते हुये कम्पनी शासन को पत्र प्रेषित किया ।

रानी लक्ष्मीबाई ने समय समय पर अनेक पत्र प्रेषित कर दामोदर राव को राज्य का वारिस स्वीकार करने का अनुरोध किया । अपने पत्रों में उन्होंने झांसी के भूतपूर्व राजा रामचन्द्र राव तथा कम्पनी के मध्य हुयी 1817 ई० की सन्धि का भी उल्लेख किया जिसके अनुसार राजा रामचन्द्र राव और उनके वारिसों को वंशानुगत रूप से झांसी राज्य का स्वामी स्वीकार किया गया था । रानी ने दतिया एवं ओरछा राज्यों के उदाहरणों का उल्लेख किया जहां हाल ही में दत्तक पुत्रों को राज्य का स्वामी [69] स्वीकार किया गया था । यद्यपि इन राज्यों के साथ हुयी सन्धियों में, झांसी राज्य से हुयी संधि की भांति स्पष्ट रूप से वंशानुगत शासन की बात स्वीकार नहीं की गयी थी ।

दामोदर राव का दत्तक संस्कार हिन्दु शास्त्र विधि एवं परम्परा के अनुरूप हुआ था, परन्तु कम्पनी सरकार ग्वालियर, दतिया तथा ओरछा से घिरे हुये झांसी के सामरिक महत्व को समझती थी । यही कारण था कि झांसी के राजाओं के साथ हुयी सन्धियों एवं मैत्रीपूर्ण सम्बन्धों को पूर्णतः नकारते हुये अपने स्वार्थ के वशीभूत होकर गवर्नर जनरल ने झांसी राज्य के अधिग्रहण का निर्णय ले लिया । फोर्ट विलियम (कल-कत्ता) से मार्च 1854 ई० को प्रेषित पत्र द्वारा इस निर्णय की सूचना पॉलिटिकल एजेन्ट मेजर मलकॉम को प्राप्त हुयी । मेजर मलकॉम ने 13 मार्च 1854 ई० को घोषणा जारी करके झांसी राज्य के निवासियों [70] को इस निर्णय की सूचना दी । रानी लक्ष्मीबाई को असिस्टेन्ट पॉलिटिकल एजेन्ट मेजर एलिस ने कम्पनी सरकार के इस निर्णय से अवगत करवाया तो क्रोधित रानी ने उद्‌गार [71] व्यक्त किये " अपनी झांसी नहीं दूंगी, "

रानी लक्ष्मीबाई ने लन्दन स्थित ईस्ट इण्डिया कम्पनी के कोर्ट ऑफ डायरेक्टर्स में वकीलों द्वारा अपना पक्ष प्रस्तुत [72] करवाया परन्तु कोई परिणाम नहीं निकला और

गवर्नर जनरल का निर्णय मान्य रहा। झांसी राज्य का अधिग्रहण अन्यायपूर्ण था, यह भारतवष में अंग्रेजों द्वारा किये गये अवैधानिक तथा अनैतिक आचरण का एक उदाहरण था।

झांसी में कम्पनी राज्य स्थापित हो जाने के पश्चात् रानी को दुर्ग छोड़कर नगर स्थित महल को अपना स्थायी आवास बनाना पड़ा। कम्पनी सरकार ने उन्हें 60,000 रुपये वार्षिक की वृत्ति जीवन यापन हेतु प्रदान की, यह धन राशि अत्यन्त अल्प थी। इसके साथ ही राजा गंगाधर राव द्वारा राज्य हित में लिये गये कर्जे की अदायगी का दायित्व भी रानी पर डाला गया। इसी कर्ज के संदर्भ में यह वृत्ति भी कम्पनी सरकार ने बाद में बन्द 73 कर दी। रानी लक्ष्मीबाई के अनेक उद्यान तथा कृषि भूमि विभिन्न बहाने बनाकर अंग्रेजों ने अधिग्रहण कर लिये। राजा गंगाधर राव की मृत्यु के समय झांसी राज–कोष में 6 लाख रुपये थे, अंग्रेजों ने दामोदर राव के हित में यह धनराशि कम्पनी सरकार के खजाने में जमा करवा दी। दामोदर राव के यज्ञोपवीत के अवसर पर इस धनराशि में से एक लाख रुपये जमानतदारों की सांक्षी 74 के पश्चात् ही रानी को प्राप्त हो सके। मराठा शासन में महालक्ष्मी मंदिर के प्रबन्ध हेतु दो ग्रामों का कर रहित राजस्व प्रदान किया जाता था कम्पनी सरकार ने इसे भी बन्द 75 करवा दिया इसके पश्चात् मंदिर की व्यवस्था रानी अपने व्यक्तिगत स्तर से करने लगी। इस प्रकार रानी लक्ष्मीबाई को अनेक समस्याओं का सामना करना पड़ रहा था। मंदिर की आय बन्द हो जाने से जनता में आक्रोश फैल गया। झांसी राज्य के विलय हो जाने के कारण राजमहल एवं दरबार के कर्मचारी निराश्रित हो गये, झांसी की सेना विघटित कर दिये जाने से सिपाहियों की जीविका समाप्त हो गयी इस प्रकार एक बहुत बड़ा वर्ग बेरोजगार हो गया।

नया भूमि प्रबन्ध लागू किया गया। इसके फलस्वरूप उदगांव, जिगना तथा नोनेर के पवांर ठाकुरों के अनेक ग्राम उनसे छिन 76 गये। अंग्रेजी शासन ने झांसी में गौवध 77 प्रारम्भ करवा दिया रानी लक्ष्मीबाई एवं झांसी राज्य की प्रजा ने इसका सख्त विरोध किया। मिशनरीज द्वारा किये जा रहे धर्म परिवर्तनों से जनता क्रोधित थी। इस प्रकार झांसी राज्य का प्रत्येक आम और खास व्यक्ति अनुभव कर रहा था कि कम्पनी राज्य में उनके आर्थिक सामाजिक तथा धार्मिक अधिकार असुरक्षित हैं।

1857 ई० के मई माह में झांसी नगर में समाचार फैला कि बाजार में बेचे जा रहे आटे में पिसी हुयी हड्डी 78 मिली है। अंग्रेजी सरकार ने इस समाचार का खण्डन किया परन्तु जनता ने उनका विश्वास नहीं किया। झांसी में क्रान्ति की प्रतीक चपातियों का प्रसार हुआ, अंग्रेजी सेना में यह समाचार भी तेजी से फैला कि सैनिकों को वितरित किये गये कारतूसों में गाय एवं सुअर की चर्बी का उपयोग किया गया है। इस समाचार से हिन्दू और मुस्लिम सैनिक अपने धर्म के प्रति चिन्तित होने लगे।

10 मई 1857 ई० को मेरठ में क्रान्ति की ज्वाला धधक उठी और शीघ्र ही समस्त उत्तर भारत इसके प्रकाश से ज्योतिर्मय हो गया। झांसी इससे अछूता कैसे रह सकता था जबकि इसके बीज यहां पहले से ही विद्यमान थे। झांसी की सैनिक छावनी76 के कुछ बंगले 1 जून 1857 को जला दिये गये, अंग्रेजों ने इसे मात्र एक दुर्घटना समझा।

5 जून 1857 को बारहवीं नेटिव इन्फैन्ट्री तथा बारहवीं आर्टीलरी के जवानों ने सैनिक छावनी स्थित तारागढ़ (स्टारफोर्ट) की सैनिक घेरा बन्दी 80 करके झांसी में क्रान्ती का शुभारम्भ कर दिया। उस समय तारागढ़ में कम्पनी सरकार का खजाना 81 (5 लाख रुपये) तथा तोपों, गोला बारूद का विशाल भण्डार था। अंग्रेज अधिकारी तथा एंग्लो इण्डियन सुरक्षा की दृष्टि से भागकर झाँसी दुर्ग 82 में चले गये। ग्वालियर दतिया, समथर, टीकमगढ़ तथा कानपुर सहायता हेतु तीव्रगामी सन्देश भेजे गये। अंग्रेज अधिकारियों ने रानी लक्ष्मीबाई से झांसी राज्य का प्रभार ग्रहण 83 कर दुर्ग में फंसे हुये अंग्रेजों के जीवन की रक्षा करने की प्रार्थना की।

6 जून 1857 ई० को झांसी नगर से एक भीड़ सैनिक छावनी में पहुँची अहसान अली नामक व्यक्ति ने मुस्लिमों को नमाज के लिए आमंत्रित किया। नमाज के पश्चात् सभी सिपाही विद्रोह में शामिल हो गये। सिपाहियों ने अपने अंग्रेज अधिकारियों पर आक्रमण कर दिया। कैप्टन डनलप, दो लैफ्टीनेन्ट कैम्पवेल तथा टर्नवुल 84 इस संघर्ष में मारे गये। लैफ्टीनेन्ट टॉयलर गम्भीर रूप से घायल हुआ परन्तु वह किसी प्रकार झांसी दुर्ग में पहुँचने में सफल हुआ। दुर्ग का द्वार बन्द कर अंग्रेजों, एग्लोइण्डियन्स तथा कटेरा के ठाकुर के सिपाहियों 85 ने दीवारों और बुर्जों पर चढ़कर पहरेदारी प्रारम्भ कर दी। छावनी से सिपाही जेल पहुँचे, उन्होंने कैदियों को आजाद कर दिया। जेल दरोगा तथा

जेल रक्षक भी क्रान्तिकारियों के साथ मिल गये । इसके पश्चात् कचहरी एवं सैनिक छावनी के बंगलों में आग लगा दी गयी ।

7 जून 1857 ई० को क्रान्तिकारी सिपाहियों ने दुर्ग पर आक्रमण किया परन्तु वे असफल रहे और अंग्रेज दुर्ग में सुरक्षित बने रहे ।

8 जून 1857 ई० को पुन: क्रान्तिकारियों का आक्रमण दुर्ग पर हुआ इसमें कैप्टन गॉर्डन मारा गया । गॉर्डन की मृत्यु से अंग्रेजों का आत्म विश्वास समाप्त हो गया और उन्होंने अभयदान की शर्त पर क्रान्तिकारियों के समक्ष आत्म समर्पण कर दिया । दुर्ग से बाहर निकलते ही अंग्रेजों को बन्दी बना लिया गया । क्रान्तिकारी सिपाही इन्हें नगर के बाहर स्थित तारागढ़ की ओर ले जाने लगे । झोकनबाग के समीप पहुँचते ही झांसी में सिपाही क्रान्ती के नेता रिसालदार कालाखान के आदेश से उन सभी का वधकर दिया गया बन्दियों में से श्रीमती मुटलोव एवं दो बच्चे किसी प्रकार छिपकर भाग जाने में सफल हुये । इस हत्याकाण्ड में कैप्टन स्किन भी मारा गया । झोकनबाग के इस नरसंहार [86] में जेल दरोगा बख्शीश अली ने मुख्य भूमिका अदा की । अंग्रेजों ने इस नरसंहार के लिए रानी लक्ष्मीबाई को उत्तरदायी माना था परन्तु वे इस अमानुषिक कार्य से पूर्णत: अनभिज्ञ थीं । मार्टिन [87] नामक अंग्रेज अधिकारी द्वारा दामोदर राव को बाद में लिखे पत्र से भी रानी निर्दोष सिद्ध होती हैं ।

झोकनबाग नरसंहार में मासूम बच्चों और स्त्रियों का भी वध कर दिया गया था अत: इसे किसी भी प्रकार से न्यायोचित नहीं ठहराया जा सकता है परन्तु इसकी पृष्ठभूमि में अवश्य ही कुछ ठोस कारण रहे होंगे । प्रथम स्वातंत्र्य युद्ध में विफल भारतीयों पर अंग्रेजों ने असंख्य बर्बर अत्याचार किये, सैकड़ों निर्दोष नागरिकों को फांसी पर लटकाया गया, बच्चों एवं स्त्रियों को भी बख्शा नहीं गया । लखनऊ, कानपुर तथा इलाहबाद में अवर्णनीय क्रूरता का व्यवहार सैनिक, असैनिकों के साथ किया गया ।

क्रान्तिकारी सिपाहियों ने झांसी अंग्रेज विहीन कर 8 जून 1857 ई० को घोषणा [88] की— "खल्क खुदा का मुल्क बादशाह का तथा शासन दो धर्मों का" देश के समस्त

क्रान्तिकारियों ने मुगल बादशाह बहादुरशाह द्वितीय को अपना नेता माना था अत: दिल्ली का महत्व पुन: बढ़ गया। झांसी के क्रान्तिकारी सिपाही भी दिल्ली जाना चाहते थे परन्तु उनके पास धन की कमी थी। धन की कमी को पूरा करने हेतु उन्होंने रानी लक्ष्मीबाई से निवेदन किया हम राज्य का शासन सूत्र आप को सौंप कर दिल्ली जाना चाहते हैं हमें तीन लाख रुपये दिये जाये, उन्होंने धमकी भी दी कि मांग पूरी न किये जाने पर हम महल उड़ा देंगे। क्रान्तिकारी सिपाहियों ने सदाशिव राव (झांसी की गद्दी का एक दावेदार) को सत्ता हेतु सौदेबाजी के लिए झांसी बुला लिया। रानी लक्ष्मीबाई ने परिस्थिति की विषमता को अनुभव करते हुये क्रान्तिकारी सिपाहियों को एक लाख रुपये मूल्य के आभूषण प्रदान 89 किये। इसके पश्चात् पुन: घोषणा 90 की गयी "खल्क खुदा का मुल्क बादशाह का राज रानी लक्ष्मीबाई का" इसके पश्चात् क्रान्तिकारी सिपाही 11 जून 1857 ई० को दिल्ली चले गये।

इस प्रकार अशान्त वातावरण में रानी लक्ष्मीबाई का शासन झांसी में प्रारम्भ हुआ। सर्व प्रथम रानी ने शान्ति व्यवस्था स्थापित करने के प्रयास किये। शासन सूत्र सम्भालते ही उन्हें शत्रुओं से सामना करना पड़ा। सदा शिवराव, (राजा गंगाधर राव का रिश्ते में भतीजा था) झांसी की गद्दी का दावेदार था उसने करैरा दुर्ग पर अधिकार करके अपने को झांसी का राजा घोषित कर दिया, रानी ने शीघ्र ही सेना भेजकर उसे बन्दी बना लिया।

क्रान्तिकारी सिपाहियों के झांसी से चले जाने के पश्चात् रानी लक्ष्मीबाई ने कूटनीति से काम लेते हुये सागर के कमिश्नर डब्लू. इ. इरस्किन को पत्र लिखकर सूचित किया कि वे स्वयम् विद्रोहियों के साथ नहीं थी, विद्रोहियों की हिंसक 91 धमकियों के कारण उन्हें धन दिया था एवं जनहित में शासन का प्रभार ग्रहण किया है। रानी ने कम्पनी सरकार से शान्ति व्यवस्था स्थापित करने हेतु सेना भेजने का भी अनुरोध किया था। इरस्किन ने 2 जुलाई 1857 ई० को घोषणा पत्र 92 जारी किया। इस घोषणा पत्र से रानी लक्ष्मीबाई को ईस्ट इण्डिया कम्पनी की सरकार की ओर से शासन करने, राजस्व संग्रह, शान्ति व्यवस्था हेतु पुलिस संगठित करने का अधिकार प्राप्त हो गया। पत्र लिखकर इस प्रकार रानी निकटवर्ती अंग्रेज अधिकारियों से निश्चित हो गयी परन्तु

गवर्नर जनरल, 93 इरस्किन के विचारों एवं कार्यों से सहमत न था। गवर्नर जनरल का मत था कि रानी ने प्रत्येक अवसर पर विप्लवियों को सहायता प्रदान की थी। गवर्नर जनरल का मत निराधार न था अपने पूर्व सम्बन्धों के आधार पर रानी लक्ष्मीबाई पेशवा नाना साहब, राव साहब तथा तत्याटोपे के सम्पर्क में थी ये सभी क्रान्तिकारियों का नेतृत्व कर रहे थे। रानी का सम्बन्ध बानपुर के राजा मर्दनसिंह जू देव से भी था जो ललितपुर जनपद में क्रान्तिकारियों का नेतृत्व कर रहे थे।

झांसी पर रानी लक्ष्मीबाई का शासन था, ओरछा एवं दतिया के बुन्देला राजाओं ने रानी को निर्बल समझकर इस स्थिति का लाभ उठाना चाहा। ओरछा में लड़ई रानी के संरक्षण में हमीर सिंह शासन कर रहा था। ओरछा राज्य के दीवान नत्थे खां ने 3 सितम्बर 1857 ई० को 40,000 सैनिकों तथा 24 तोपों की विशाल 94 सेना के साथ झांसी राज्य में प्रवेश किया। मऊरानीपुर तथा बरूवा सागर पण्डवाहा 95 पर अधिकार करने के पश्चात् ओरछा की सेना ने राजधानी झांसी का घेरा डाल दिया। नत्थेखाँ ने नगर एवं दुर्ग समर्पित करने हेतु रानी को संदेश भेजा। झांसी राज्य की स्थापना ओरछा राज्य के एक भू भाग पर बुन्देलों को विवश करके मराठों द्वारा की गयी थी अतः ओरछा के शासकों ने झांसी पुनः प्राप्त करने का यह सुअवसर माना। संकट के इस अवसर पर रानी लक्ष्मीबाई ने धैर्य नहीं खोया उन्होंने अपने स्वामी भक्त राजपूतों तथा विलायतियों (पठान) की सहायता से दुश्मन का डटकर सामना किया। दीवान नत्थे खां के नेतृत्व में आयी ओरछा की सेना दो माह 96 तक झांसी घेरे रही अंत में रानी ने उन्हें मार भगाया इस संकट के समय बानपुर के राजा मर्दन सिंह 97 ने रानी की हर सम्भव सहायता की। रानी ने शीघ्र ही ओरछा की सेनाओं को झांसी के सभी परगनों से निकाल बाहर किया इस विजय के पश्चात् रानी और उनकी सेना को आत्म. विश्वास प्राप्त हुआ।

ओरछा की सेना के आक्रमण के अवसर पर रानी ने जबलपुर के अंग्रेज कमिश्नर को भी सहायता हेतु पत्र लिखा परन्तु कोई परिणाम 98 नहीं निकला। गवर्नर जनरल लार्ड कैनिंग ने 11 फरवरी 1854 ई० के अपने पत्र 99 में सर रॉबर्ट मिल्टन को निर्देश दिया कि हयूरोज झांसी पर आक्रमण की तैयारी कर रहे हैं, युद्ध के फलस्वरूप रानी को

बन्दी बनाये जाने पर उनकी जांच विशेष आयोग द्वारा की जायेगी। पत्र में आगे लिखा है कि अगर रानी को झांसी में कैद रखने में कोई परेशानी हो तो उन्हें इलाहबाद लाया जाये, परन्तु उन्हें अपने भविष्य के विषय में कोई संदेह नहीं होना चाहिये। गवर्नर जनरल का विचार था कि रानी लक्ष्मीबाई विद्रोहियों की नेता और झोकनबाग नरसंहार 100 के लिए उत्तरदायी थी। अपने पूर्व अनुभवों के आधार पर रानी लक्ष्मीबाई को अंग्रेजों से न्याय की आशा न थी। उन्हें विश्वास हो गया था कि विप्लव के कारण उत्पन्न अशान्ति तथा अव्यवस्था पर नियंत्रण प्राप्त करते ही अंग्रेज उसे अपदस्थ कर देंगे। रानी और उसके सहायक सरदारों को स्वतंत्र शासन का अनुभव प्राप्त हो रहा था वे ओरछा की सेना को परास्तकर चुके थे इस प्रकार झांसी अंग्रेजों के विरुद्ध संगठित हो रहा था। रानी लक्ष्मीबाई के मुख्य दरबारी — गंगाधर शास्त्री (राजगुरू) मोरोपंत ताम्बे (रानी के पिता) दीवान लक्ष्मणराव (प्रधानमंत्री) काशीनाथ (राजा गंगाधर राव का कुटुम्बी जो उस समय झांसी का तहसीलदार था) थे। रानी के सेनापति जवाहर सिंह थे। झांसी की सेना में करारी के कुंवर वीर बहादुर सिंह, रक्सा के मोहनसिंह, जरैयावार के रघुनाथ सिंह, कटीली के कुंवर ज़ंगबहादुर सिंह के अतिरिक्त गनपत गिरि, झड़ूकुंवर, मंगलसिह भुजवल सिंह तथा रनधीर सिंह, मनशाराम, लालता बाबा, गणेश जू, दूल्हा जू, लालू वख्शी मुख्य योद्धा थे। 101 गुलाम गौस खां तोपखाने का प्रमुख था इसके अतिरिक्त दोस्त खां तथा खुदाबख्श जैसे कुशल तोपची रानो की सेवा में थे। पवांरों, बुन्देलों, मराठों के अतिरिक्त झांसी की सेना में बड़ी संख्या में स्वामी भक्त पठान भी थे जो विलायती कहलाते थे। रानी लक्ष्मीबाई वीर एवं दूरदर्शी योद्धा थीं, उनमें नेतृत्व एवं संगठन की अद्भुत क्षमता थी, युद्ध की भीषणता एवं विस्तार का अनुमान उन्हें पहले से ही था अत: उन्होंने झांसी की स्त्रियों को संगठित करके एक सहायक सेना बनाई। सुन्दर, मुन्दर काशीबाई, मोतीबाई, जूही, दुर्गा आदि नारियां इस सहायक सेना में थीं। स्त्री सेना झांसी की अतिरिक्त शक्ति थी।

रानी लक्ष्मीबाई बाह्य एवं आंतरिक शत्रुओं से घिरी हुयी थीं परन्तु अंग्रेजों से लड़ने का निश्चय करने के पश्चात् वे एक क्षण के लिए भी चिन्तित न हुयीं जिस साहस, दृढ़ संकल्प एवं कौशल से उन्होंने युद्ध किया उसकी प्रशंसा शत्रुओं ने भी की थी। ओरछा

दतिया, ग्वालियर जैसे बड़े राज्यों के अतिरिक्त कटेरा ककरवई, गुरसराय तथा धमना के छोटे–छोटे जागीरदार भी कम्पनी सरकार की सेवा में उपस्थित थे। इन राज्यों के शासकों ने अंग्रजों को महत्वपूर्ण सहायता प्रदान की। अंग्रेजों ने 1857 ई० के संग्राम में विजय प्राप्त करने के पश्चात् इन राज्यों के शासकों को युद्धकाल की सेवाओं के उपलक्ष्य में पुरस्कृत किया। ओरछा राज्य [102] द्वारा टहरोली परगने का राजस्व 3000 रुपये झांसी के राजा को कर के रूप में दिया जाता था, झांसी के अंग्रेजी राज्य में विलय के पश्चात् यह धन राशि कम्पनी सरकार को प्राप्त होने लगी थी, युद्ध काल में सहायता के उपलक्ष्य में यह कर माफ कर दिया गया इसके साथ ही कम्पनी सरकार ने मोहनपुरा का इस्तमरारी राजस्व(200 रुपये वार्षिक) भी माफ कर दिया। इसी प्रकार कटेरा के जागीरदार को 5000 रुपये का खरीता एवं राजा बहादुर की उपाधि प्रदान [103] की गयी ककरवई के जागीरदार को राय [104] की उपाधि प्राप्त हुयी। धमना के दीवान मनसबदार को उसके भाई पारीक्षित की जागीर [105] भी युद्ध सेवा के संदर्भ में प्राप्त हो गयी क्यों कि स्वातंत्र्य युद्ध में पारीक्षित ने अंग्रेजों से विद्रोह किया था।

रानी लक्ष्मीबाई ने झांसी की सुरक्षा के सभी पहलुओं का विवेचन कर नगरकोट, उसके द्वारों तथा बुर्जों को सुदृढ़ करवाया। अस्त्र शस्त्रों का संग्रह तथा निर्माण किया जाने लगा, तोपों को दुरुस्त कर विशद् परिणाम में गोले ढाले गये। आपत्काल की आपूर्ति हेतु खाद्यान्नों के विशाल भण्डार [106] संग्रहित किये गये। रानी की सेवा में आदिल खान एवं फिरोज शाह [107] नामक दो मुगल अधिकारी थे इन्होंने नगर के इर्द गिर्द के सभी वृक्ष एवं अन्य वनस्पतियां नष्ट कर दीं, इससे शत्रु को घास का तिनका भी प्राप्त न हुआ।

वीरांगना लक्ष्मीबाई के नेतृत्व में झांसी क्रान्तिकारियों का गढ़ बन गया, उन्हें यहां हर प्रकार की सहायता एवं सुविधा उपलब्ध हो रही थी। तालबेहट का दुर्गपति जवाहिर सिंह [108] अपने 60 बहादुर साथियों के साथ, तालबेहट पर अंग्रजों का अधिकार हो जाने के पश्चात् झांसी आ गया था। बानपुर के राजा मर्दन सिंह [109] रानी लक्ष्मीबाई के विश्वस्त सहयोगी थे उन्होंने भी झांसी आकर रानी के साथ युद्ध के सम्बन्ध में विचार विमर्श किया।

सर ह्यूरोज के नेतृत्व में झांसी की ओर बढ़ती हुयी विशाल अंग्रेजी सेना की जानकारी रानी को गुप्तचरों से प्राप्त हो रही थी। असीम धैर्य के साथ वह महान् वीरांगना झांसी की सुरक्षा में व्यस्त थी। खाद्यान्न भण्डारों सैनिक साजो सामान तथा तोपों का निरीक्षण परीक्षण रानी स्वयम् करती थी। वीरांगना रानी सेना की परेड का व्यक्तिगत स्तर से निरीक्षण कर सैनिकों को उत्साहित करती थी।

युद्ध प्रारम्भ होने के पूर्व अंग्रेजों का संदेश वाहक रानी के नाम पत्र लेकर झांसी आया। पत्र में निर्देश था कि रानी अपने प्रधानमंत्री लक्ष्मणराव मोरोपंत ताम्बे, लालू बख्शी तथा अन्य पांच मंत्रियों (जिनके नाम पत्र में दिये गये थे) के साथ कैप्टन के समक्ष 110 उपस्थित हों। रानी के साथ सशस्त्र अंगरक्षक न हो। रानी लक्ष्मीबाई ने यह अपमान जनक प्रस्ताव ठुकरा दिया। झांसी की ओर से पत्र का उत्तर दिया गया—"आपके पत्र में मुलाकात का उद्देश्य नहीं दर्शाया गया, न ही सुरक्षा का आश्वासन दिया गया, झांसी राज्य की सामान्य परम्परा के अनुरूप प्रधानमंत्री सशस्त्र अंगरक्षकों सहित आप से भेंट कर सकता है रानी 111 अवश्य ही स्त्री होने के कारण नहीं आ सकती"।

सेन्ट्रल इण्डिया फील्डफोर्स के सेनापति सर ह्यूरोज के नेतृत्व में 21 मार्च 1858 को अंग्रजी सेना झांसी के द्वार पर आ पहुँची। ह्यूरोज ने समीप से नगर का भौगोलिक निरीक्षण कर निर्णय लिया कि घेराबन्दी करके नगर पर अधिपत्य 112 स्थापित किया जाये। झांसी की रक्षा हेतु 10,000 राजपूतों मराठों तथा विलायतियों के अतिरिक्त 400 अश्वारोहियों सहित 1500 सैनिक 113 वीरांगना रानी लक्ष्मीबाई के नेतृत्व में सन्नद्ध खड़े थे। झांसी की सेना के पास भवानी शंकर, कड़क बिजली जैसी विशाल तोपों के अतिरिक्त 40 अन्य बड़ी छोटी तोपें भी थी।

अंग्रेजी सेना ने झांसी नगर को चारों ओर से घेर कर गोला बारी प्रारम्भ कर दी। दुश्मन दक्षिण से विशेष आक्रमण कर रहा था क्योंकि दक्षिण दिशा में दुर्ग स्थित था, इस दिशा में दुर्ग नगर से घिरा हुआ भी नहीं था। रानी अपने दृढ़ संकल्प एवं साहस के बल पर झांसी की छोटी सी सेना लेकर विश्व की तातकालीन आधुनिकतम सेना का

सामना कर रही थी । झांसी की तोपों ने बराबर की शक्ति से गोलाबारी कर दुश्मन का स्वागत किया । अंग्रेजी सेना ने 25 मार्च 1858 ई० को भीषण गोलाबारी कर झांसी की तोपों को शान्त कर दिया । रानी के प्रोत्साहन पर तोपखाना प्रमुख गुलाम गौस खां ने अंग्रेजों के प्रसिद्ध तोपची को मार डाला, झांसी में हर्ष व्याप्त हो गया रानी ने स्वर्ण कंकण [114] इनाम में देकर अपने बहादुर सेनानी का सम्मान किया । झांसी तोपखाने ने दुश्मन के बहुत से सैनिक मार गिराये । इसके पश्चात् अंग्रेजों ने नगर पर भीषण गोलाबारी की, इससे नागरिक मारे जाने लगे । कुछ गोले उस स्थल पर भी गिरे, जहां इमली के वृक्षों के साये में गोला बारूद तैयार किये जा रहे थे, इसके फलस्वरूप तीस पुरुष, स्त्रियाँ स्थल पर[115] ही मारे गये । तीव्र युद्ध से जन शक्ति नष्ट हो रही थी परन्तु झांसी की सेना के उत्साह में कोई कमी नहीं थी । रानी द्वारा संगठित स्त्री सेना ने युद्ध में महत्वपूर्ण भूमिका अदा की, मोर्चों पर तैनात सिपाहियों के लिए गोला बारूद ले जाने छतिग्रस्त दीवारों, कंगूरों आदि को शीघ्र पुन: बनाने के अतिरिक्त स्त्रियां सैनिकों को विश्राम देने के लिए उनके स्थान पर भी कार्य करतीं थीं ।

29 मार्च 1858 ई० को अंग्रेजी सेना झांसी दुर्ग के एक बुर्ज को आंशिक क्षति पहुँचाने में सफल हुयी परन्तु रात्रि में ही झांसी वालों ने बुर्ज का पुर्ननिर्माण कर लिया । झांसी तोपखाने ने दूसरे दिन अंग्रेजों पर शक्तिशाली गोले बरसाये, ये गोले डेढ़ मन (60 किलोग्राम) वजन [116] के थे । रानी के निर्देशन में निर्मित, झांसी तोपखाने के गोले अंग्रेजी सेना के गोलों से अधिक विध्वंसक सिद्ध हो रहे थे । झांसी की तोपों और तोपचियों के कौशल की प्रशंसा अंग्रेजों ने भी की थी । प्रसिद्ध तोप कड़क बिजली की मार से दुश्मन भयभीत थे जो उन्हें एक क्षण भी विश्राम नहीं लेने देती थी । झांसी की तोपों से छूटते गोलों के कारण नगर एवं दुर्ग अग्निपुंज के सदृश [117] प्रतीत होता था । सेनापति ह्यूरोज को अपनी सेना हेतु बारूद की कमी अनुभव हो रही थी अत: उसने नसैनी द्वारा अपने सैनिकों को नगर में पहुँचाने को योजना बनायी, इसी समय उसे समाचार मिला कि प्रसिद्ध सेनानी तात्याटोपे 22000 सैनिकों एवं 29 तोपों की विशाल सेना [118] लेकर झांसी की रानी की सहायतार्थ आ रहा है ।

तात्याटोपे ने बेतवा के तट पर शिविर लगाया और पहाड़ी पर आग जलाकर[119] रानी को अपने आने का संकेत किया। सर ह्यूरोज विचित्र स्थितिमें फंस गया परन्तु उसने धैर्य न छोड़ा और अपने 1500 सैनिकों को दो भागों में विभाजित कर तात्याटोपे की सेना पर आक्रमण कर दिया। एक भाग का नेतृत्व ब्रिगेडियर स्टुअर्ट को सौप कर दूसरे भाग का संचालन वह स्वयम् कर रहा था। अंग्रेजों के इस तीव्र एवं दोहरे आक्रमण से तात्याटोपे की सेना भ्रमित हो गयी, तात्याटोपे अंग्रेजी सेना की संख्या और स्थिति का आकलन न कर सका उसके 1500 सैनिक[120] मारे गये तथा गोला बारूद सहित तोपखाने के एक भाग पर अंग्रेजों का अधिकार हो गया। अंग्रेजों एवं तात्याटोपे के मध्य हुये युद्ध के समय झांसी की सेना शान्त रही क्योंकि रानी के एक सेनानी लालता बाबा ने विश्वास घात[121] करके उन्हें स्थिति की गलत जानकारी दी थी।

रानी ने अपने सेना नायकों एवं सैनिकों को, जो तात्या की हार से हतोत्साहित थे सम्बोधित करते हुये कहा—— जिस अद्वितीय साहस और गर्व के साथ लड़ने का निश्चय किया गया है उसी प्रकार संघर्ष जारी रखेंगे, चाहे कहीं से सहायता प्राप्त हो अथवा न हो। रानी ने स्वर्णा भूषण योद्धाओं को पुरस्कार में प्रदान कर उन्हें सम्मानित किया। वे प्रत्येक मोर्चे का स्वयम् निरीक्षण कर[122] सैनिकों को उत्साहित कर रहीं थीं।

तात्याटोपे से निवृत्त होने के पश्चात् सर ह्यूरोज ने अपनी समस्त सैन्य शक्ति झांसी पर अधिपत्य स्थापित में लगा दी। अंततः 2 अप्रैल 1858 ई० की रात्रि में अंग्रेज नगर कोट में एक दरार[123] बनाने में सफल हो गये इसके द्वारा उनके सैनिक नगर में प्रवेश करने लगे, कुछ कुछ सैनिक नसैनी[124] लगाकर नगर में प्रवेश करने लगे। शत्रु के प्रवेश को देखते ही झांसी की रणभेरी बजने लगी और दुश्मनों पर चारोओर से आक्रमण होने लगा। समाचार मिलते ही रानी लक्ष्मीबाई पुरुषवेश में स्वयम् इस मोर्चों पर पहुँची और शत्रु पर झपट पड़ी। रानी दोनों हाथों से तलवार[125] चलाकर दुश्मन को काट काट कर गिरा रही थी। रानी और उसके बहादुर सैनिकों की तलवारों के आगे दुश्मन ठहर न सके, वे दूर से छिप छिपकर रानी और उसके सैनिकों पर गोलियां चलाने लगे इसी

समय झांसी सेना के देश द्रोहियों दूल्हा जू 126 तथा पीर अली के षड़यन्त्र से नगर के कुछ अन्य द्वार खुल गये और सैकड़ों शत्रु नगर में प्रवेश कर गये। स्थिति की विषमता देखते हुये एक वयोवृद्ध सरदार 127 ने रानी से दुर्ग में चलकर शत्रु से लड़ने हेतु अन्य योजना बनाने का आग्रह किया अंततः रानी दुर्ग में वापिस आ गयी झांसी की सेना और निवासियों ने अंग्रेजी सेना से पग पग पर संघर्ष किया, प्रत्येक मोहल्ले और मकान पर वीर जनता से उनका सामना हुआ। भीषण मार काट के पश्चात् 3 अप्रैल 1858 ई०के सन्ध्याकाल तक महल (रानीमहल) और आधा नगर अंग्रेजों के अधिकार में आ गया। अंग्रेज झांसी से झोकनबाग में हुये नरसहार का प्रतिशोध लेना चाहते थे अतः उन्होंने नगर में कत्लेआम जारी कर दिया इसमें स्त्रियों और बच्चों को भी नहीं बख्शा गया।

झांसी दुर्ग एवं नगर का पश्चिमी तथा उत्तरी भाग अब भी रानी के अधिकार में था, अपनी प्रजा पर हो रहे जुल्म से वह शोक सागर में निमग्न थी। रानी ने अपने दरबारियों के परामर्श से कालपी जाकर पेशवा की सेना 128 में सम्मिलित होने का निश्चय किया। रानी ने 4 अप्रैल 1858 ई० की रात्रि में अपने नगर झांसी को उदासमन से छोड़ा, रानी के साथ उनके पिता मोरोपन्त ताम्बे, पुत्र दामोदर राव एवं अन्य विश्वस्त सहयोगी थे। इनके अतिरिक्त 300 विलायती (पठान) एवं 25 अश्वारोही 129 भी रानी के साथ थे। नगर के भाण्डेरी द्वार से निकलकर रानी ने कालपी की ओर प्रस्थान किया, मोरोपन्त ताम्बे इस दल से बिछुड़ गये रात्रि थी अतः वे रास्ता भटक कर दतिया पहुँच गये। दतिया के राजा ने उन्हें बन्दी बनाकर झांसी भेज दिया और अंग्रेजों ने उन्हें झोकनबाग 130 में फांसी पर लटका दिया। चारो ओर फैली अंग्रेजी सेना तथा उनके वफादारों से बचते हुये झांसी से सुरक्षित प्रस्थान करना, रानी की वीरता एवं युद्ध कौशल का परिचायक है।

झांसी से चलकर रानी भाण्डेर पहुँची, इसी समय अंग्रेज सेना नायक वॉकर उनको खोजता हुआ वहां पहुँचा, रानी ने उसे जख्मी कर गिरा 131 दिया। रानी मध्य रात्रि में कालपी पहुँची, उन्होंने वहां राव साहब से भेंट की, जो उनकी बाल्यावस्था के साथी और पेशवा की सेना के सेनापति थे। रानी लक्ष्मीबाई के कालपी पहुँचने से सेना में उत्साह का

संचार हो गया रानी तथा राव साहब के अनुरोध पर जालौन जनपद के सेंगर ठाकुरों ने क्रान्तिकारी सेना को हर सम्भव सहायता प्रदान की बव्बल सिंह (संघर्ष की समाप्ति पर अंग्रेजों ने इनकी जागीरें छीन कर तरसौल एवं जय सिंहपुरा स्थित इनकी गढ़ियों को जला दिया था) इनका नेता था। क्रान्तिकारियों ने अंग्रेजी सेना से कोंच एवं कालपी में भीषण युद्ध किया परन्तु वे असफल हुये।

कालपी युद्ध के पश्चात् क्रान्तिकारियों ने विचार विमर्श किया सुदृढ़ आश्रय एवं सहायता प्राप्त करने हेतु रानी लक्ष्मीबाई की सलाह से ग्वालियर चलने का निर्णय लिया गया। इस प्रकार महान् देश भक्तों का यह दल ग्वालियर पहुँच गया। ग्वालियर का शासक जयाजीराव सिन्धिया अपने दीवान दिनकर राव राजवाड़े के प्रभाव के कारण अंग्रेजों का मित्र था। महाराजा सिन्धिया ने 1 जून 1858 ई० को क्रान्तिकारी सेना पर आक्रमण 132 कर दिया, रानी लक्ष्मीबाई एवं राव साहब ने भाषण देकर अपने सैनिकों को उत्साहित किया। मोर्चे पर रानी की उपस्थिति सैनिकों को प्रेरणा दे रही थी। सिन्धिया की तोपों द्वारा छोड़ गये गोलों का धुआं भी न छटने पाया था कि क्रान्तिकारी सैनिकों ने तोपों पर अधिपत्य जमा लिया। महाराजा सिन्धिया के अंगरक्षकों के अतिरिक्त उनकी समस्त सेना क्रान्तिकारियों से मिल गयी यह तात्याटोपे का प्रभाव था जो अनेक बार क्रान्ति का संदेश लेकर ग्वालियर के सैनिकों से पहले मिल चुका था। सेना के क्रान्तिकारियों से मिल जाने के पश्चात् महाराजा जयाजीराव सिन्धिया अपने दीवान दिनकर राव राजावाड़े के साथ अंग्रेजों के पास आगरा 133 चले गये।

क्रान्तिकारियों को ग्वालियर की सेना एवं प्रजा दोनों का सहयोग प्राप्त हुआ, वहां पेशवा राज्य की घोषणा की गयी और राव साहब, पेशवा के प्रतिनिधि के रूप में शासन के अध्यक्ष बनाये गये। सिन्धिया का कोषाध्यक्ष अमरचन्द बाँठिया भी क्रान्तिकारियों के प्रभाव में था उसने नये शासक को सैनिकों का वेतन वितरित करने हेतु पर्याप्त धन उपलब्ध करवाया। नये शासन को सहयोग प्रदान करने हेतु मित्र राजाओं राजा बानपुर एवं राजा शाहगढ़ को पत्र 134 प्रेषित किये गये।

ग्वालियर पर रानी लक्ष्मीबाई और उनके क्रान्तिकारी साथियों के अधिकार का समाचार पाकर अंग्रेज अवाक् रह गये। ग्वालियर के सुदृढ़ दुर्ग पर क्रान्तिकारियों का अधिपत्य, वहां की सेना तथा जनता का सहयोग उन्हें प्राप्त होना, अंग्रेजी शासन के लिए संकट का प्रतीक था। स्थिति की गम्भीरता को दृष्टिगत रखते हुये सर ह्यूरोज ने ग्वालियर पर चारोओर से आक्रमण करने की योजना बनाकर सैन्य व्यूह की रचना की तथा अपने सेना नायकों को आवश्यक निर्देश दिये।

सर ह्यूरोज 16 जून 1858 ई० को ग्वालियर की सैनिक छावनी मोरार पहुँच कर वहां अधिकार 135 करने में सफल हो गया। राव साहब जो ग्वालियर आकर रागरंग आनन्दोत्सव में मग्न था, रानी लक्ष्मीबाई ने उसे युद्ध की तैयारी जारी रखने हेतु समझाया था परन्तु उस पर कोई असर नहीं हुआ, अब अंग्रेजी सेना के आगमन से भयभीत हो उठा। रानी लक्ष्मीबाई ने अद्वितीय धैर्य से स्थिति को सम्भाला। वीर सेनानी तात्याटोपे तथा बांदा के नवाब अली बहादुर द्वितीय के साथ उन्होंने शीघ्र ही युद्ध योजना तैयार की।

17 जून 1858 को कोटे की सराय नामक निकटवर्ती ग्राम से बढ़कर ब्रिगेडियर स्मिथ ग्वालियर दुर्ग के दक्षिण पश्चिम में पहुँच गया, इस मोर्चे पर रानी लक्ष्मीबाई स्वयम् क्रान्तिकारी सेना का नेतृत्व कर रही थी। दोनों पक्षों की तोपें एक दूसरे पर भीषण गोलाबारी कर रही थीं। रानी ने कुशलता पूर्वक सैन्य संचालन करते हुये क्रान्तिकारियों के साथ अंग्रेजी सेना के हरावल के दाहिने पक्ष पर तीव्र आक्रमण किया अतः दुश्मन भागने लगा। इसी समय ब्रिगेडियर स्मिथ के नेतृत्व में खड्ग और बन्दूक धारी आठवीं हुसार्स सेना के अनुभवी आश्वारोहियों ने क्रान्तिकारियों पर प्रहार प्रारम्भ कर दिये। भयंकर मारकाट हो रही थी रानी लक्ष्मीबाई अपने अश्व की रास मुँह में दबाये दोनों हाथों में एक एक तलवार लिये दुश्मन को काट रही थी। हुसार्स सैनिकों की मार से क्रान्तिकारी सैनिक भागने लगे। रानी लक्ष्मीबाई भागते हुये सैनिकों को लौटाने का प्रयास करते हुये सेना से अलग थलग पड़ गयीं, यद्यपि कुछ विश्वासपात्र साथी अब भी उनके साथ थे। अचानक एक गोरे सैनिक ने संगीन से रानी के वक्ष के निचले भाग पर

जोर से प्रहार किया, रक्त बहने लगा परन्तु उसने शेरनी की भाँति पलट कर शत्रु को मार डाला। दूसरे सैनिक की गोली से रानी का प्यारी सखी मुन्दरबाई की मृत्यु हो गयी, रानी ने तलवार से आक्रमणकारी के दो टुकड़े कर दिये, वे आगे बढ़ना चाहतीं थीं उनका नया घोड़ा स्वर्ण रेखा (बरसाती नदी जो अब नाला बन गयी है) पार नहीं कर सका, इसी वक्त उनकी बांयी जांघ पर गोली लगी, दांये हाथ की तलवार उन्होंने घाव को दबाने के लिए छोड़ दी और बांये हाथ से वार कर शत्रु को धराशायी कर दिया। एक हुसार्स ने रानी के मस्तक पर तलवार का भरपूर वार किया इससे उनका सिर नेत्र तक चिर गया वेग से रक्त बहने लगा परन्तु रानी ने गिरते गिरते एक बार पुन: शौर्य का प्रदर्शन करते हुये वारकर, दुश्मन का कन्धा काट डाला। रानी के पठान सरदार गुलमोहम्मद ने उस हुसार्स का वधकर दिया। रानी के अन्य सरदार रामचन्द्र देश मुख तथा दीवान रघुनाथसिंह जीवन का मोह त्याग कर हुसार्स पर टूट पड़े अत: हुसार्स सैनिक भाग निकले। घायल रानी को उनके सरदार समीप स्थित साधु गंगादास की पर्ण-कुटी में ले गये। साधु ने पवित्र गंगाजल उनके मुख में अर्पित किया, रानी ने क्षीण स्वर में ऊँ नमो भगवते वासुदेवाय उच्चारित कर वीरगति [136] प्राप्त की। शीघ्र ही शोकाकुल सरदारों ने अपनी स्वामिनी का अग्निसंस्कार कर दिया। रानी की हार्दिक इच्छा कि अंग्रेज उसके शव को भी स्पर्श न कर सकें, पूर्ण हो गयी।

झांसी की रानी लक्ष्मीबाई अजेय सेनानी थी उसने स्वातंत्र्य युद्ध में अपना जीवन अर्पण कर दिया। ब्रिगेडियर स्मिथ[137] ने 25 जुलाई 1858 ई० को भेजी अपनी आख्या में लिखा– रानी झांसी ने युद्धभूमि में मृत्यु का वरण किया। रानी झांसी क्रान्तिकारयों की प्रेरणा थी उसके वीरगति प्राप्त करते ही क्रान्तिकारियों को ग्वालियर से भागना पड़ा। अंग्रेजों ने ग्वालियर पर अधिकार करके महाराजा जयाजीराव सिन्धिया को पुन: सिंहासन पर बैठाया परन्तु ग्वालियर दुर्ग अपने अधिपत्य में ही रखा सिन्धिया के कोषाध्यक्ष ने कान्तिकारियों को धन दिया था अत: उसे ग्वालियर के सराफा बाजार में नीम के पेड़ से लटका कर फांसी दे दी गयी और चेतावनी के रूप में उसका शव अनेक[138] दिनों तक पेड़ से लटकाये रखा गया।

रानी लक्ष्मीबाई के कालपी प्रस्थान के पश्चात् 5 अप्रैल **1858** ई० को ही झांसी पर अंग्रेजों का अधिपत्य स्थापित हो गया परन्तु बेतवा एवं धसान नदियों के मध्य क्रान्तिकारियों का अधिपत्य **139** बना रहा। ब्रिटिश साम्राज्ञी विक्टोरिया की 1 नवम्बर 1858 ई० की सार्वजनिक घोषणा के पश्चात् शनैः शनैः शान्ति स्थापित हुयी।

1857 ई० के स्वातंत्र्य युद्ध में अंग्रेजों को सिन्धिया से महत्वपूर्ण सहयोग प्राप्त हुआ अतः 1861 ई० में ब्रिटिश सरकार ने झांसी दुर्ग एवं नगर जयाजीराव सिन्धिया **140** को प्रदान कर दिया इस प्रकार झांसी ग्वालियर राज्य का भाग बन गया।

1886 ई० में अंग्रेजों ने पुनः सिन्धिया महाराजा को ग्वालियर दुर्ग एवं मोरार छावनी देकर झांसी वापिस ले लिया। झांसी को ब्रिटिश भारत के संयुक्त प्रान्त (आगरा एवं अवध) का एक ज़िला **141** बनाया गया। स्वतंत्र भारत में संयुक्त प्रान्त का नामकरण उत्तर प्रदेश हुआ। वर्तमान में झांसी उत्तर प्रदेश में सम्मिलित बुन्देलखण्ड के पांच जनपदों (झांसी, ललितपुर बांदा, हमीरपुर तथा जालौन) का सम्भागीय मुख्यालय है।

संदर्भ

1– झांसी गजेटियर पृ. ।

2– झांसी गजेटियर पृ. 344

3– पन्त, पी० सी०, प्री हिस्टोरिक उत्तर प्रदेश पृ. 45

4– काले एवं लाल प्रकार (ब्लैक एण्ड रैड वेयर) के मृद्भाण्डों के कुछ टुकड़े लेखक को एरच से प्राप्त हुये थे।

5– महा भारत (प्रथम खण्ड)– सभा पर्व पृ. 838

6– द हिस्ट्री एण्ड कल्चर ऑफ द इण्डियन पीपुल वॉ. दो द ऐज आफ इम्पीरियल यूनिटी पृ. ।

7– भण्डारकर डी० आर०, कार माइकल लैक्चर्स वॉ. एक पृ० 52 कलकत्ता 1919

8– मुकर्जी राधाकुमुद, अशोक पृ. 3–7

9– पाण्डेय राजवली, अशोक के अभिलेख पृ. 117

10– प्रो० बी० बी० लाल भूतपूर्व महानिदेशक भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण से प्राप्त जानकारी के आधार पर

11– डॉ० ओ० पी० एल० श्रीवास्तव निदेशक राजकीय संग्रहालय झांसी ने इस सिक्के का अध्ययन कर मत व्यक्त किया है कि ईसा पूर्व द्वितीय शताब्दी में झाँसी क्षेत्र विदिशा से शासित न था अपितु कौशाम्बी, अहिक्षत्रा, मथुरा, अयोध्या तथा विदिशा की भाँति एक स्वतंत्र राज्य था।

12– त्रिवेदी एस० डी०, बुन्देलखण्ड का पुरातत्व पृ० 97, श्रीवास्तव ओ० पी० एल०, (एरच जिला झांसी से प्राप्त प्रथम शती ईसा पूर्व का इष्टिका अभि-लेख) ध्यानम् पृ० 109 (संयुक्तांक 5–6) 19–85

13– डॉ० ओ० पी० एल० श्रीवास्तव निदेशक राजकीय संग्रहालय झांसी ने एरच के पुरावशेषों के आधार पर मत व्यक्त किया है कि एरच को चेदी महा जन–पद की राजधानी शुक्तिमती के रूप में पहिचाना जा सकता है।

14– त्रिवेदी एस० डी०, बुन्देलखण्ड का पुरातत्व पृ० 32

15– मिहिरकुल का ग्वालियर प्रस्तर अभिलेख कार्पस इंस्क्रप्शनम् इण्डिकेरम वॉ तीन पृ० 161–164

16– सरकार डी० सी०, सिलैक्ट इंस्क्रप्शन वॉ एक पृ० 386

17– वॉर्ट्स टी०, युवॉन च्यॉग्स ट्रेविल इन इण्डिया वॉ. दो पृ० 412

18– बुचकला अभिलेख एपिग्राफिका इण्डिका वॉ. नौ पृ० 199

19– आर्क्योलॉजिकल सर्वे ऑफ इण्डिया वॉ. दस पृ० 101

20– सीयदोणि अभिलेख, इपिग्राफिका इण्डिका वॉ. एक पृ० 162–79

21– त्रिवेदी एस० डी० स्कलपचर्स इन द झांसी म्यूजियम पृ० 45 पृ० 49

22– त्रिवेदी एस० डी०, द जराय टेम्पिल एट बरुवासागर

23– पाठक विशुद्धानन्द, उत्तर भारत का राजनैतिक इतिहास पृ० 377

24– वही पृ० 161

25– एपिग्राफिका इण्डिका वॉ. एक पृ० 129

26- राज्य संग्रहालय लखनऊ कलाकृति संख्या इ–25

27- राजकीय संग्रहालय झांसी कलाकृति संख्या 79.50

28- खैलार से प्राप्त राजकीय संग्रहालय झांसी में सुरक्षित कलाकृतियाँ– विष्णु क० सं० 83.21, नवग्रह क. सं. 83.22, नृत्य गणेश क. सं. 83.25

29- राजापुर से प्राप्त राजकीय संग्रहालय झांसी में सुरक्षित कलाकृतियाँ विष्णु क. सं. 84.3, ढोलवादक क. सं. 84. 10,

30- लहर ग्राम में देवी मंदिर का मण्डप कणाश्म पाषाण के चन्देलकालीन स्तम्भों पर आधारित है

31- बड़ागांव स्थित उच्चतर माध्यमिक विद्यालय के कुंये पर स्तम्भों के टुकड़े लगे हैं, ग्राम के बाहर मुख्य सड़क पर बने हुये लघुमंदिर के समीप रखे शिला पट्ट पर कीर्तिमुख अंकित है ये सभी स्थापत्यीय खण्ड चन्देलकालीन हैं।

32- एनुअल रिपोर्ट ऑफ द आरक्योलॉजिकल सर्वे ऑफ इण्डिया वॉ. दस पृ॰ 98–99, वॉ इक्कीस पृ० 173

33- वही वॉ. इक्कीस पृ॰ 71

34- पाठक विशुद्धा नन्द, उत्तर भारत का राजनैतिक इतिहास पृ॰ 426

35- वही पृ० 426

36- एपीग्राफिका इण्डिका वॉ० सोलह पृ० 272––277

37- बोस० एस० एन०, हिस्ट्री ऑफ चन्देलाज ऑफ जैजाक भुक्ति पृ० 82, फुटनोट 60

38- जौहर से सम्बन्धित अभिलेख गढ़कुण्डार दुर्ग के प्रांगण में रखे हैं।

39- ओरछा स्टेट गजेटियर पृ० 17

40- वही पृ० 18

41- वही पृ० 19

42- वही पृ॰ 21

43- वही पृ॰ 23

44- झाँसी गजेटियर पृ॰ 44

45- पॉग्सन डब्लू० आर०, ए हिस्ट्री ऑफ बुन्देलाज पृ०105

46- झाँसी गजेटियर पृ० 48
47- सर देसाई जी० एस०, न्यू हिस्ट्री ऑफ द मराठाज वॉ० दो पृ० 230
48- ओरछा गजेटियर पृ० 34
49- झाँसी गजेटियर पृ० 48
50- श्रीवास्तव ए० एल०, शुजाउद्दौला वॉ० एक पृ० 122—123
51- वही पृ० 123
52- शेजवलकर टी० एस० "डेन्जर टु झाँसी" इण्डियन हिस्टोरिकल रिकॉर्ड्स कमीशन प्रोसीडिंग्स वॉ० सत्ताइस पार्ट टू पृ० 49
53- वही पृ० 53
54- एचीसन सी० यू० भाग तीन पृ० 164-167
55- वही पृ० 84
56- वही पृ० 169
57- फॉरेन डिपार्टमेन्ट पॉलिटिकल प्रोसीडिंग्स क्राउन ए, 31 मार्च 1854 नं० 177
58- पालियामेन्ट्री पेपर्स एनेक्सेशन ऑफ झाँसी पृ० 18
59- वही पृ० 17
60- वही पृ० 18
61- फ्रीडम स्ट्रगल इन उत्तर प्रदेश वॉ० एक पृ० 48
62- पारसनीस डी० बी० झाँसी की रानी लक्ष्मीबाई पृ० 18
63- तहमनकर डी० इ०, द रानी ऑफ झाँसी पृ० 23
64- पारसनीज डी० बी०, झाँसी की रानी लक्ष्मीबाई पृ 37
65- वही पृ० 37
66- फॉरेन डिपार्टमेन्ट पॉलिटिकल कॉसुलेशन नं० 514
67- सिन्हा एस० एन०, रानी लक्ष्मीबाई ऑफ झाँसी पृ० 16
68- फॉरेन डिपार्टमेन्ट्स पॉलिटिकल प्रोसीडिंग्स क्राउन ए 31 मार्च 1854 नं० 13
69- वही नं० 163
70- झाँसी डिवीजन प्रीम्युटिनी रिकॉर्ड्स वॉ० सत्तासी डिस्पैच तेइस फाइल एक 1954

71- अरनॉल्ड इ॰, द मरक्विश ऑफ डलहौजीज एडमिनिस्ट्रेशन ऑफ ब्रिटिश इण्डिया वॉ॰ दो पृ॰ 151

72- फॉरेन डिपार्टमेन्ट पॉलिटिकल कॉन्सुलेशन 2 मार्च 1855 नं॰ 75

73- माझा प्रवास (आँखों देखा गदर पृ॰ 79)

74- पारसनीस डी॰ बी॰ झाँसी की रानी लक्ष्मीबाई पृ॰81-82

75- झाँसी गजेटियर पृ॰55

76- वही पृ॰ 55

77- झांसी डिवीजन प्रीम्युटिनी रिकॉर्ड्स वॉ. अट्ठासी डिस्पैच 28 फाईल 7 सन् 1854

78- पिंकने एफ० डब्लू पृ० 2

79- केय जे० डब्लू० एण्ड मॉलसन जी० बी०, इण्डियन म्युटिनी ऑफ 1857 वॉ॰ एक पृ० 122

80- फॉरन डिपार्टमेन्ट पॉलिटिकल कॉन्सूलेशन (सप्लीमेन्ट नं० 280) 30 दिसम्बर 1859

81- फॉरेन डिपार्टमेन्ट सीक्रेट कन्सूलेशन (नं. 103) 26 जून 1857

82- झाँसी गजेटियर पृ० 56

83- माझा प्रवास आँखों देखा गदर (पृ० 79-80)

84- पिंकने एफ० डब्लू, पृ॰ 4--5

85- मॉल्सन जी- बी॰, हिस्ट्री ऑफ द इण्डियन म्युटिनी 1857-58 वॉ॰ एक पृ॰ 186

86- केय जे॰ डब्लू॰, ए हिस्ट्री ऑफ द सिपाही वार इन इण्डिया वॉ॰ तीन पृ॰ 369 फुट नोट

87- मिश्रा ए० एस०--पृ० 346

88- पिंकने एफ० डब्लू॰ पृ॰ 6

89- पारसनीस डी॰ बी॰ झाँसी की रानी लक्ष्मीबाई पृ॰ 103

90- मजुमदार आर॰ सी॰, सिपाही म्युटिनी एण्ड रिवोल्ट इन 1857 पृ॰ 147

91- मिश्रा ए० एस० -पृ० 337

92- वही- पृ० 338-348

93- वही-पृ० 338
94- पारसनीस डी० बी०, झाँसी की रानी लक्ष्मीबाई पृ० 109
95- ओरछा स्टेट गजेटियर पृ० 36
96- फॉरेन डिपार्टमेन्ट पॉलिटिकल कॉन्सुलेशन (सप्लीमेन्ट नं० 266) 30 दिसम्बर 1859
97- पिंकने एफ० डब्लू० पृ० 15
98- फॉरेन डिपार्टमेन्ट पॉलिटिकल कॉन्सुलेशन (सप्लीमेन्ट नं० 266) 30 दिसम्बर 1859
99- मिश्रा ए० एस०-पृ० 338
100- वही
101- फॉरेन डिपार्टमेन्ट सीक्रेट कॉन्सुलेशन नं० 147 3० अप्रेल 1858
102- ओरछा स्टेट गजेटियर पृ० 37
103- एचीसन सी० यू० वॉ० पाँच पृ० 37
104- वही
105- वही पृ० 278
106- माझा प्रवास (आँखों देखा गदर पृ०83)
107- फ्रीडम स्ट्रगल इन उत्तर प्रदेश वॉ तीन पृ० 221-227
108- वही पृ० 291
109- वही पृ० 292
110- माझा प्रवास (आँखों देखा गदर पृ० 84)
111- वही पृ० 84
112- मिश्रा ए० एस० पृ० 339
113- वही
114- सुन्दर लाल, भारत में अग्रेजी राज वॉ दो पृ० 938
115- वही
116- तिवारी गोरेलाल बुन्देलखण्ड का संक्षिप्त इतिहास पृ० 361
117- फॉरेस्ट जी० डब्लू० वॉ० चार पृ० 122

118- केय जे॰ डब्लू॰ एण्ड मॉल्सन जी॰ बी॰ द हिस्ट्री ऑफ सिपाही वार इन इण्डिया पृ॰ 112

119- मिश्रा ए॰ एस॰ 339

120- केय जे॰ डब्लू एण्ड मॉल्सन जी॰ बी॰ द हिस्ट्री ऑफ सिपाही वार इन इण्डिया पृ॰ 112

121- तहमनकर डी॰ इ॰, द रानी ऑफ झाँसी पृ॰ 118

122- पारसनीस डी॰ बी॰ झाँसी की रानी लक्ष्मीबाई पृ॰ 147

123- फॉरेस्ट जी॰ डब्लू॰-वॉ॰ चार पृ॰ 45

124- मिश्रा ए॰ एस॰-पृ॰ 339

125- फ्रीडम स्ट्रगल इन उत्तर प्रदेश वॉ तीन पृ॰ 333

126- पारसनीस डी॰ बी॰ झाँसी की रानी लक्ष्मीबाई पृ॰ 150

127- माझा प्रवास (आँखों देखा गदर पृ॰ 97-98)

128- वही पृ॰ 102-103

129- मिश्रा ए॰ एस॰ पृ॰ 340

130- वही पृ॰ 341

131- वही

132- ग्वालियर गजेटियर पृ॰ 45

133- वही पृ॰ 46

134- वही

135- वही पृ॰ 47

136- रानी लक्ष्मीबाई एवं अंग्रेजों के मध्य हुये अंतिम युद्ध में रानी ने वीरगति प्राप्त की, विवरण हेतु दृष्टव्य तहमनकर डी॰ इ॰, द रानी ऑफ झाँसी पृ॰ 150-57 तिवारी गोरेलाल, बुन्देलखण्ड का संक्षिप्त इतिहास पृ॰ 370 पारसनीस डी॰ बी॰ झाँसी की रानी लक्ष्मीबाई पृ॰ 242-51 अमृत बाजार पत्रिका (15अगस्त 1957) के विशेषांक में प्रकाशित रानी के भाई चिन्तामन राव ताम्बे की पौत्री श्रीमती यमुना शास्त्री का लेख।

137- फॉरेस्ट जी• डब्लू• वॉ• चार एपेन्डिक्स जी

138- म्युटिनी पेपर बन्डल नं• २ ऑफिस ऑफ द रजिस्ट्रार हिस्टोरिकल रिकॉर्ड्स मध्य प्रदेश ग्वालियर में रखे गंगाधर राव के पत्र के आधार पर

139- झांसी गजेटियर पृ॰ 69

140- वही पृ• 344

141- झांसी गजेटियर पृ• 344 ग्वालियर गजेटियर पृ• 48, तिवारी गोरेलाल बुन्देलखण्ड का संक्षिप्त इतिहास पृ• 372

स्थापत्य–

स्थापत्यीय विशेषतायें- नगर विन्यास, दुर्ग, प्रासाद मन्दिर मस्जिद,गिरजाघर, गोसांइयों के स्मारक, राजाओं की छतरियाँ सती मन्दिर, मकबरे, कब्रिस्तान, ब्रिटिश-स्मारक !

झांसी के बहुसंख्यक स्मारक मुगल तथा बुन्देला स्थापत्य शैली को सम्मिश्रित कर निर्मित किये गये हैं । इनके अतिरिक्त कुछ स्थानीय नवीन गुणों का भी समावेश यहां के स्मारकों में देखने को मिलता है ।

स्थापत्यी विशेषतायें :—

1- मुगल शैली के अनुरूप तोरण द्वार पर सादा मेहराब कटावदार तथा बुन्देला स्थापत्य की शंकुआकार मेहराबों से झाँसी के स्मारकों के द्वार सुसज्जित किये गये थे । इनके अतिरिक्त गोलद्वार बनाकर उसे कटावदार मेहराब के (चूने में) अलंकरण से सजाया जाता था यह पूर्णतः स्थानीय परम्परा थी इस प्रकार के द्वार रानीमहल, मन्दिर मुरली मनोहर, तथा राजा गंगाधर राव की छतरी में निर्मित हैं ।

2- यहाँ के महलों में मुगल शैली के फव्वारे तथा सजावट हेतु दीपक रखने के लघु आलों के समूह बनाये गये थे ।

3 मन्दिरों पर उत्तुंग शिखर अथवा गुम्बज स्थापित किये जाते थे । नुकीले गुम्बजो के अतिरिक्त

बुन्देला शैली के (सर्बोच्च भाग पर चपटापन लिये) विशिष्ट गुम्बजों से भी मन्दिर विभूषित किये जाते थे ।

4- गुम्बज और शिखर के केन्द्र पर नीचे से ऊपर की ओर क्रमशः अधोमुख कमल, अमलका मणिचक्र, कलश तथा कमल स्थापित किये जाते थे । सबसे ऊपर कमल का निर्माण बुन्देला स्थापत्य का विशिष्ट लक्षण था ।

5- मुख्य शिखर और गुम्बज के चारो कोनो पर एक एक लघु मन्दिरों के बीच धनुषाकार वितान सहित द्वार निर्मित कर मन्दिर को भव्यता प्रदान की जाती थी । ये लघु मन्दिर पंचायतन शैली के प्रतीक भी है ।

6- बुन्देला शैली के अनुरूप गुम्बज तथा धनुषाकार वितान कमल पंखुड़ियों से पूर्णतः आवृत्त कर मनमोहक बनाये जाते थे । कमल पंखुड़ियों की सज्जा झाँसी में अत्यंत लोक प्रिय थी मन्दिरों के गुम्बज ही नहीं अपित मकबरों तथा मजारों के गुम्बज भी इस प्रकार के अलंकरण से सुसज्जित किये गये थे।

7- पाषाण खण्डों, लाखोरी ईटों का आवश्यकतानुसार उपयोग करके भवन निर्मित किये गये थे चूने तथा कौड़ी का प्लास्टर कर भित्तिचित्रण किया जाता था ।

8- चूने के प्लास्टर पर कलाभिप्रायों को उत्कीर्ण करने का प्रचलन था ।

नगर विन्यास :—

मराठो ने अपने नवीन राज्य की राजधानी झांसी को उत्तुंग मन्दिरों भव्य प्रासादो तथा उद्यानों से सुसज्जित कर सुन्दर नगर का रूप प्रदान किया था यह नगर बुन्देला काल में अस्तित्व मेंआ गयाथा, परन्तु इसको नियोजित करने का श्रेय प्रथम मराठा प्रशासक नारोशंकर को है नारोशंकर ने बुन्देला राज्यों से घिरे हुये इस मराठा राज्य की राजधानी झांसी के चारो ओर सुदृढ़ परकोटे का निर्माण कराकर इसे सुरक्षित कर दिया था परकोटे से सुरक्षित नगर—झांसी— दुर्ग को तीन ओर से घेरे हुये है । मराठों की इस राजधानी

में आवागमन हेतु दस द्वार बनाये गये थे—दतिया, उन्नाव, भाण्डेर, बड़ा गांव, सागर, ओरछा तथा सइय्यर (नगरों एवं ग्रामों) की ओर जाने हेतु बने मार्गों पर स्थित द्वार उस नगर या ग्राम के नाम से ही जाने जाते हैं। महालक्ष्मी मन्दिर के समीप स्थित नगर द्वार लक्ष्मी दरवाजा कहलाता है। झरना द्वार के निकट तलैया है वर्षाकाल में आसपास के पहाड़ी क्षेत्र का पानी झर झर (बहबह) कर इसमें एकत्रित होता था अत: यह झरना द्वार कहलाने लगा। खण्डोवा, खण्डेराव के मंदिर हेतु जिस मार्ग से जाते हैं उस पर खण्डेराव द्वार स्थित था। इन द्वारों का प्रवेश घुमावदार था सुरक्षा हेतु इनके दोनों पार्श्वों में एक बुर्ज बनाये गये थे लकड़ी के मजबूत फाटकों से द्वार बन्द कर दिये जाते थे। विशाल द्वारों के अतिरिक्त नगर में आने जाने के लिये नौ खिड़कियाँ (लघुद्वार) भी हैं। सूजे खाँ खिड़की भैरो खिड़की, भूरेखाँ खिड़की चाँदखाँ खिड़की तथा गनपत गिरि खिड़की मराठा सेना के योद्धाओं के नाम से प्रसिद्ध हैं। पठानों सय्यदों के गोल (समूह) जहाँ बसे थे उसके समीप की खिड़की, अलीगोल खिड़की कहलाती है। बंगलाघाट खिड़की,--बंगाली समुदाय द्वारा इसके समीप दुर्गा प्रतिमा का विसर्जन किया जाता है, अत. इस नाम से जानी जाती है। झरना द्वार के निकट का लघुद्वार झरना खिड़की तथा सागर द्वार के समीप का लघु द्वार सागर खिड़की कहलाता है। नगर कोट में सुरक्षा हेतु स्थान स्थान पर बुर्ज तथा अन्दर से बन्दूक चलाने हेतु छिद्र बनाये गये थे।

नगर के दक्षिण पश्चिम में आंतिया ताल, पूर्व में लक्ष्मी ताल तथा उत्तर में कुछ दूरी पर मानो का ताल तथा मैरी का ताल नामक झीलों का निर्माण पहाड़ी क्षेत्र में वर्षाकाल में बहने वाले जल को एकत्रित करने के लिए किया गया था, इनके जल से नगर के चारों ओर हरितिमा विद्यमान रहती है। नगर के अन्दर भी मराठा काल में अनेक पक्के सरोवर थे जो नष्ट हो चुके हैं। वर्तमान में मात्र एक सरोवर "पानी की धर्मशाला" शेष है इसके तट पर सहस्त्रलिंग महादेव का भव्य मन्दिर है। झीलों सरोवरों के अतिरिक्त प्राचीनकाल में यहाँ अनेक उद्यान थे जिनके केवल नाम ही अब शेष हैं-- जोगन बाग (जोखन बाग) मेहन्दी बाग, खर्जूरबाग तथा दीक्षित बाग सुगन्धपुरी, सुन्दरपुरी, शैगरपुरी तथा नारायण पुरी गोसांइयों के उद्यान यहाँ थे इनमें मात्र नारायण पुरी का नारायणबाग राजकीय संरक्षण से अपने प्राचीनरूप में विद्यमान है।

दुर्ग

झाँसी दुर्ग प्रथम स्वातंत्र्य युद्ध के अनेक स्वर्णिम अवसरों एवं उसके पूर्व के गौरवमय इतिहास की स्मृति अपने हृदय में संजोये बंगरा पहाड़ी पर गर्व से खड़ा है। इसका निर्माण ओरछा के बुन्देला महाराजा वीरसिंहजू देव ने मौज महल के रूप में करवाया था। इसका उपयोग राजधानी ओरछा की निकटतम रक्षा चौकी के रूप में भी किया जाता था। ओरछा से झाँइसी (छायामात्र) दिखने के कारण यह झाँइसी दुर्ग भी कहलाता था। इस दुर्ग पर क्रमशः बुन्देलों, उनके प्रतिनिधि रूप में गोसांइयों, मुगल तथा मराठों का अधिपत्य रहा। अंतिम चरण में ईस्ट इण्यिा कम्पनी, रानी लक्ष्मीबाई ईस्ट इण्डिया कम्पनी सिन्धिया सरकार के अधिकार में रहने के पश्चात् यह दुर्ग ब्रिटिश सरकार के अधिपत्य में आ गया था। स्वतंत्र भारत में इसकी व्यवस्था एक महत्वपूर्ण राष्ट्रीय स्मारक के रूप में भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण द्वारा की जाती है।

मुख्य रूप से झाँसी दुर्ग के तीन भाग हैं--गणेश मन्दिर क्षत्र, मौजमहल तथा शंकरगढ़,। गणेश मन्दिर क्षेत्र बंगरा पहाड़ी का उत्तरी ढलान है। नगर से दुग में प्रवेश करने पर सर्वप्रथम यह क्षेत्र मिलता है, यह मौजमहल में प्रवश हेतु प्राचीन मार्ग है। चार विभिन्न स्थलों पर द्वार बनाकर इस मार्ग की सुरक्षा व्यवस्था सुदृढ़ की गयी थी। नगर की ओर से प्रवेश करने पर प्रथम एवं द्वितीयद्वार के मध्य एक खुली वीथिका है। इस वीथिका में बांयी ओर दुर्ग की वाह्य दीवार से सटा हुआ अर्ध-वृत्ताकार मंच है। मंच पर बीचोबीच कणाश्म पाषण (ग्रेनाइट) की शिला में दो बड़े छेद हैं जो झाँसी राज्य के ध्वज दण्ड को स्थापित करने के काम आते थे। द्वितीय द्वार के पश्चात् भूमि का धरातल असाधारण रूप से ऊंचा है। यहाँ एक सुन्दर बारहदरी का निर्माण इस प्रकार से किया गया था कि उसका एक कोना द्वितीय द्वार के ठीक ऊपर स्थित है। बारहदरी ऊंचे मंच पर स्थिति चौकोर लघुकक्ष है। मंच का निर्माण तलघर के रूप में किया गया था जो जल भण्डारण हेतु प्रयुक्त होता था। बारहदरी की छत कुण्ड के रूप में निर्मित है इस कुण्ड से जल चारों दिशाओं में तीन तीन गजमुख फव्वारों द्वारा निकलता था, बारहदरी के वितान में लगे फव्वारे में भी इस छत वाले कुण्ड से ही जल

जाता था। बारहदरी का फर्श भी चौकोर कुण्ड के रूप में निर्मित किया गया था। प्रत्येक दिशा में कटावदार सुन्दर मेहराबों से सुसज्जित तीन तीन द्वारों का समायोजन बारहदरी में है। मेहराबों के ऊपर प्रत्येक दिशा में टूड़ों पर आधारित कंगनी है। टूड़ों की रचना मयूर एवं शुक युगलों के रूप में की गयी है। इन टूड़ों के मध्य कौड़ी के प्लास्टर से निर्मित श्वेत धरातल पर लता पत्रों तथा पुष्पों का चित्रण कत्थई रंग से किया गया था। बारहदरी के फब्बारों में जलप्रवाह हेतु ताम्र तथा मृण्य की नलिकाओं (ताम्बे तथा मिट्टी के पाइपों) का संयोजन था। बारहदरी के पश्चिम में मुगल शैली का सुन्दर फब्बारा है, मंच की दीवार पर मुगल शैली के अनुरूप छोटे छोटे आले दीपकों की सजावट हेतु बनाये गये थे। समीप ही कक्षों एवं एक दालान के खण्डहर हैं। स्थापत्यीय विशेषताओं से प्रतोत होता है कि यह झाँसी के मराठा शासकों का दरबार स्थल था।

बारहदरी के आगे तृतीय एवं चतुर्थ द्वार के मध्य ऊँचे मंच पर धनुषाकार वितान से आवृत्त एक कक्षीय गणेश मन्दिर है। धनुषाकार वितान राजपूत स्थापत्य की विशेषता है इस प्रकार के वितान राजस्थान एवं ग्वालियर के स्मारकों में देखने को मिलते हैं। मंदिर में दोनों पार्श्वों एवं सम्मुख भाग में कटावदार मेहराब का एक एक द्वार है। कौड़ी के प्लास्टर पर कत्थई फुलकारी का चित्रण कर मन्दिर सुसज्जित किया गया था। इसमें चतुर्भुजी गणपति की विशाल प्रतिमा प्रतिष्ठापित है। देव आसन पर विराजमान हैं इनके दाहिने सामान्य हाथ में अक्षयसूत्र एवं दाहिने अतिरिक्त हाथ में अंकुश है। बांये सामान्य हाथ में स्वदंत एवं बांये अतिरिक्त हाथ में परशु है। सुण्ड वक्ष तक सीधी लटककर तुण्ड पर दाहिनी ओर घूमती हुयी कुण्डलित है, इसी कुण्डली में मोदक फंसा है। देव के सूर्पकर्ण बड़ी बड़ी बालियों से सुसज्जित है। शीश पर सुन्दर किरीट मुकुट है। मुकुट पर दो वृत्ताकार पुष्प अंकित हैं। दाहिने पुष्प पर अर्ध चन्द्र शोभित है। देव के मस्तक पर त्रिनेत्र है, हारमाला व्यालयज्ञोपवीत कंकण तथा नूपुर से वे अलंकृत हैं। पादपीठ पर वाहन मूषक अंकित है। प्रतिमा विज्ञान की दृष्टि से यह प्रतिमा महत्वपूर्ण है देव के मस्तक पर त्रिनेत्र एवं अर्धचन्द्र का अंकन इसे विशिष्टता प्रदान करते हैं। शिव के अतिरिक्त पार्वती प्रतिमाओं पर अर्धचन्द्र एवं त्रिनेत्र अंकन की परम्परा गुप्तकाल में प्रचलित थी अहिक्षत्रा[1] से प्राप्त पार्वती मस्तक इसका श्रेष्ठ उदाहरण है।

अर्धचन्द्र मध्यकालीन शिव प्रतिमाओं के अतिरिक्त महाकाल[2] तथा कद्चित पार्वती[3] प्रतिमाओं पर अंकित मिलता है। कुमायूँ क्षेत्र की गणेश प्रतिमाओं में त्रिनेत्र देव[4] के मस्तक की शोभा बढ़ा रहा है। कम्पिल (फर्रूखाबाद) से प्राप्त बारहवीं शताब्दी की नृत्य गणेश प्रतिमा[5] में भी देव के त्रिनेत्र है तथा जटा मुकुट पर दांये अर्धचन्द्र सुशोभित है तिरूमलै तिरूपति देव स्थानम् संग्रहालय (आंध्रप्रदेश) में प्रदर्शित अठारवीं उन्नीसवीं शताब्दी की गणेश प्रतिमा में देव के मस्तक पर अर्धचन्द्र का अलंकरण है। बंगाल में दुर्गा पूजा हेतु बनायी जाने वाली दुर्गा प्रतिमाओं में अर्धचन्द्र एवं त्रिनेत्र अंकन की परम्परा वर्तमान में भी प्रचलित है। इस प्रकार हम देखते हैं कि अर्धचन्द्र तथा त्रिनेत्र अंकन की परम्परा भारतवर्ष के विभिन्न भागों में गुप्तकाल से प्रारम्भ होकर वर्तमानकाल तक प्रचलित है इसी संदर्भ में मराठों ने अपने इष्टदेव गणपति की इस प्रतिमा को सुसज्जित किया था। गणेश मन्दिर के पीछे स्थित बुर्ज पर प्रसिद्ध तोप भवानीशंकर रखी है।

मुगल स्थापत्य के अनुरूप तोरणद्वार पर मेहराब निर्मित कर चतुर्थ द्वार का समायोजन किया गया है। इसकी ड्योढी में दोनों पार्श्वों में तीन-तीन द्वार वाले कम ऊंचाई के दालान हैं इनकी छत पर पहुंचने हेतु जीने बने हैं यह नौबत खाना है इस पर बैठकर मंगल वाद्य बजाये जाते थे। नौबतखाना राजपूतों के प्रासाद स्थापत्य का विशिष्ट अंग था। नौबतखाने में बजने वाले मंगल वाद्य राजा का यशोगान करते थे। ड्योढी के पश्चात् लघु आंगन है इसमें दाहिनी ओर बड़ा दालान एवं बांयी ओर एक द्वार है। इस द्वार से प्रवेश करने के पश्चात् झाँसी दुर्ग के सबसे बड़े मैदान में पहुँचते हैं। यह मौजमहल के पूर्व में स्थित है। नौबत खाने तथा छोटे आंगन के दालान के द्वारों के मेहराब बीचोबीच पूर्णतः शंकुआकार अर्थात् विशिष्ट बुन्देला शैली हैं। मराठों के अधिपत्य में आने के समय चतुर्थ द्वार ही इस दुर्ग का मुख्य द्वार था और मराठों ने अपने आराध्य देव गणपति का मन्दिर द्वार के बाहर निर्मित करवा दिया था। मार्ग के अन्य सभी द्वार मराठों ने दुर्ग विस्तार के साथ साथ निर्मित करवाये थे।

मौज महल के पूर्व में झाँसी-दुर्ग का सबसे बड़ा मैदान है यह बंगरा पहाड़ी का

पूर्वी ढलान था। इसको विशाल बुर्जो सहित ऊँची प्राचीर बनाकर सुरक्षित किया गया है। यहाँ प्रसिद्ध तोप कड़क बिजली रखी हुयी है। मैदान की दक्षिणी दीवार के सहारे बने हुये दालान में चन्देल स्मारकों के स्थापत्यीय खण्डों को स्तम्भों के रूप में प्रयुक्त किया गया है।

बंगरा पहाड़ी के सम्पूर्ण उच्च क्षेत्र को विशाल बुर्जों सहित प्राचीर से आवेष्टित कर मध्य में मौजमहल का निर्माण किया गया था। इस क्षेत्र में प्रवेश हेतु पूर्वीदिशा में मुगलशैली का विशाल द्वार (तोरण पर मेहराब का संयोजन) संयोजित है। द्वार के दोनों पार्श्वों में ऊपर से नीचे तक चार चौकोर संरचनाओं के मध्य एक एक लघु आला बनाया गया हैं। द्वार के ठीक ऊपर कमलपुष्प चित्रित है। उत्तर एवं पश्चिम दिशाओं में भी ठीक इसी प्रकार के एक एक द्वार थे उत्तर का द्वार बन्द है इसे सम्भवतः मराठा काल में बन्द करवा दिया गया था क्योंकि झाँसी दुर्गकी सुरक्षा हेतु मराठों द्वारा निर्मित दोहरी किलेबन्दी की दीवारें इस द्वार के ठीक सामने भी हैं। पश्चिम का द्वार अंग्रेजों द्वारा किए गये परिवर्तन के फलस्वरूप लघु द्वार में बदल गया है, इसकी ड्योढ़ी की मेहराब विशिष्ट बुन्देला शैली की है। उत्तर एवं पश्चिम के इन द्वारों के निर्माण में चन्देल स्मारकों के स्थापत्यीय खण्डों को पुनः प्रयुक्त किया गया था। इन विशाल द्वारों के दोनों पार्श्वों में एक एक विशाल बुर्ज बनाकर इन्हें सुरक्षित किया गया था। इस सुरक्षित क्षेत्र में महाराजा वीर सिंह ने लाखौरी ईंटों से मौजमहल का निर्माण करवाया था। वर्तमान में इसकी तीन मंजिल अवशिष्ट हैं, इनमें मोटी दीवारों वाले अनेक कक्ष हैं। कहा जाता है कि यह पांच मंजिल का था, इसकी अन्य मंजिलें तथा भव्यता प्रदान करने वाले स्थापत्यीय अलंकरण 1857 ई० के स्वातंत्र्य युद्ध में नष्ट हो गए थे। मौज-महल के अतिरिक्त इस क्षेत्र में मराठाकालीन अन्य महल भी थे जो पूर्णतः नष्ट हो चुके हैं। उनके स्थापत्यीय खण्डों को अंग्रेजों ने अपने निर्माण कार्य में लगाया था। मौज़महल के पश्चिम में अंग्रेजों द्वारा जलभण्डारण हेतु बनाये गये विशाल बन्द हौज में पाषण के सुन्दर मेहराबों का प्रयोग किया गया था। जो मराठाकालीन हैं। मौजमहल के समीप ही 1857 ई० के स्वातन्त्रय युद्ध में वीरगति पाने वाले योद्धाओं गुलाम गौस खाँ खुदावख्श तथा मोतीबाई की मजार हैं।

मौजमहल क्षेत्र के पश्चिमी द्वार के आगे एक लघु मैदान है, यह बंगरा पहाड़ी का पश्चिमी ढलान था इसे भी बुर्जों एवं प्रचीर से सुरक्षित किया गया है इस मैदान की दक्षिणी दीवार में मौजमहल क्षेत्र के विशाल (मुगलशैली के) द्वारों सदृश एक विशाल द्वार है इस द्वार के दोनों पार्श्वों में एक एक दो मन्जिली कोठरियाँ है, इनके निर्माण में प्रतिहार तथा चन्देलकालीन स्थापत्यीय खण्डों का पुनः प्रयोग किया गया था। प्रतीत होता है कि महाराजा वीरसिंह द्वारा बनवाये गये मौजमहल का यह दक्षिणी वाह्य द्वार था और पहरेदारों के निवास हेतु इन कोठरियों का निर्माण किया गया था। वर्तमान में इस द्वार के दक्षिण में भूमि अत्यन्त नीची है अतः मार्ग अवरूद्ध हैं। इसके समीप मराठों द्वारा निर्मित लघुद्वार है । इसके आगे खरंजेवाला लम्बा मार्ग है जो क्रमशः ढालू है, इस मार्ग से चलकर शंकर गढ़ क्षेत्र में पहुँचते हैं।

शंकर गढ़ झाँसी दुर्ग के पश्चिमी कोण पर स्थित है यहां का कुँआ दुर्ग की जलापूर्ति का एक मात्र मुख्य साधन था। प्रथम मराठा प्रशासक नारोशंकर ने इस मुख्यजल स्रोत एवं इसके समीपवर्ती क्षेत्र को बुर्जों वाली दोहरी दीवार से घेर कर झाँसी दुर्ग का हिस्सा बना लिया था। इसके बाहर भी परिखा एवं प्राचीर से सुरक्षित बुर्ज का निर्माण सुरक्षा हेतु किया गया था। यहाँ गर्भगृह तथा अर्धमण्डप से समायोजित लघु मन्दिर है। मन्दिर का गर्भगृह बुन्देला शैली के चपटे गुम्बज से अलंकृत है । मुख्य गुम्बज के चारों कोनों पर एक एक लघु मंदिर है, एवं दो लघु मंदिरों के मध्य धनुषाकार वितान वाले चौड़े द्वारों की संरचना कर मंदिर को भव्यता एवं सौन्दर्य प्रदान किया गया है। गर्भगृह में काले पाषाण का भव्य शिवलिंग है। इस क्षेत्र का निर्माण नारोशंकर ने करवाया था तथा यहाँ शिव मंदिर भी है अतः यह क्षेत्र शंकरगढ़ कहलाता है।

झांसी दुर्ग के दक्षिण में भी दोहरी सुरक्षा प्राचीर एवं परिखा थी वह प्रथम स्वातंत्र्य युद्ध में नष्ट हो गयी थी।

प्रासाद

झाँसी दुर्ग स्थित महल के अतिरिक्त यहां दो अन्य महल रानीमहल तथा रघुनाथ महल भी हैं।

रानीमहल—

इस महल का निर्माण नेवालकर राजवंश के संस्थापक रघुनाथ राव द्वितीय (1769-1796 ई०) ने करवाया था। झाँसी के कम्पनी राज्य में विलय हो जाने के पश्चात् रानी लक्ष्मीबाई को दुर्ग स्थित महल का परित्याग करना पड़ा, रानी ने इस महल को अपना आवास बनाया, जून 1857 ई० में झांसी पर उनका शासन स्थापित होते ही वे पुनः दुर्ग स्थित महल में रहने लगीं। यह रानी लक्ष्मीबाई का निवास था अतः अनेक महत्वपूर्ण ऐतिहासिक घटनाओं का साक्षी है और रानीमहल (चित्रक्रम 3) के नाम से प्रसिद्ध है। मराठा काल में इसके समीप पुस्तकालय नजरबाग तथा अस्तवल भी थे जो प्रथम स्वातंत्र्य युद्ध में अंग्रेजों द्वारा नष्ट6 कर दिये गये थे कालान्तर में वहां नागरिक आवास बन गये वर्तमान में महल का मुख्य भाग ही संरक्षित है इसका दाहिना पार्श्व एवं पृष्ठ भाग भी नागरिक आवासों में बदल गया है।

दो मंजिल के इस महल में प्रवेश हेतु विशाल द्वार है। द्वार की गोल मेहराब पर (चूने के प्लास्टर में) कटावदार मेहराब तथा पुष्प गुच्छों का अलंकरण है, इसके ठीक ऊपर इसी प्रकार के तीन लघु द्वार बनाकर महल के मुख्य द्वार को भव्यता प्रदान की गयी है। ड्योढ़ी के पश्चात् प्रांगण है इसमें चारो ओर दोहरे दालान बने थे, इसका पश्चिमी भाग वास्तविक रूप में नही है। पूर्वी दालान के द्वार बाहर की और भी खुले हैं। ऊपर की मंजिल में पूर्वी भाग की वाह्य दीवार पर कटावदार मेहराब की अनुकृतियों में मुगल सुराई एवं मयूर अंकित है इस पूर्वी भाग के दक्षिणी सिरे पर तीन द्वारों युक्त सुन्दर मण्डप एवं लघु कक्ष है। मण्डप के बहुकोणीय द्वार स्तम्भ तथा कटावदार मेहराब पाषाण के बने हैं इन पर पुष्प उत्कीर्ण हैं। मण्डप की छत काष्ट की है बड़े शहतीरों पर छोटे तख्तों का समायोजन इस प्रकार से किया गया है कि चौखाने बन गये हैं, इन चौखानों में गहरे नीले धरातल पर श्वेत पुष्प अंकित हैं। मण्डप की पृष्ठ दीवार पर बने द्वार से लघु कक्ष में प्रवेश करते हैं, इस द्वार के दोनो ओर एक एक दीवार घड़ी का चित्रण है।

मण्डप से लगा हुआ कक्ष वर्तमान में रानीमहल का सबसे सुन्दर कक्ष है इसकी छत भी मण्डप की भाँति काष्ट निर्मित एवं चित्रित है। कक्ष मुगल शैली के चित्रण से पूर्णतः चित्रित है। लता पत्र, फुलकारी तथा गुलदस्तों के पार्श्वों में मयूर, कपोत, सारस मृग एवं खरगोश के लघु चित्रण हैं। कुछ वृक्षों पर फानूस के दीपों का अंकन कर कलाकार ने अपनी कल्पना शक्ति का परिचय दिया है। चित्रांकन अत्यंत बारीक है तथा आवश्य—

मतानुसार इनमें सभी रंगों का उपयोग किया गया है परन्तु लाल रंग का उपयोग अत्यधिक है। यह कक्ष इस महल के प्राचीन सौन्दर्य की झाँकी प्रस्तुत करने में सक्षम है। दक्षिण एवं उत्तर दिशा के दो मंजिले पर भी कक्ष हैं इनके चित्रण समाप्त हो चुके हैं।

रघुनाथ महल–

राजा रघुनाथ राव तृतीय (1835 ई०–1838 ई०) का महल नगरकोट के बाहर स्थित है, अतः इसकी सुरक्षा हेतु इसके चारो ओर सुरक्षा प्राचीर का निर्माण किया गया था इस क्षेत्र में प्रवेश हेतु पूर्व एवं उत्तर दिशा में द्वार है। पूर्वी द्वार पर सादा मुगल मेहराब का समायोजन है, परिसर में इसके समीप ही रघुनाथ राव तृतीय की मुस्लिम प्रेयसी गजरा बेगम का निवास था अतः यह द्वार चाँद दरवाजा कहलाता है। चाँद दरवाजा से प्रवेश कर परिसर के विस्तृत मैदान में पहुँचते हैं। यहाँ ठीक सामने महल स्थित है। इसमें प्रवेश हेतु मुगलशैली की सादा मेहराब वाला दो मंजिल की ऊँचाई का विशाल द्वार है। द्वार के दोनों पार्श्वों में दो मंजिला दालान है जिनके द्वार अंदर के प्रांगण में हैं। प्रवेश द्वार के ठीक ऊपर गोल मेहराबदार तीन लघुद्वार बनाकर इसे भव्य एवं सुन्दर बनाया गया है, इसकी ड्योढ़ी में दोनों पार्श्वों में तिमंजिला नौवत खाना हें। ड्योढ़ी के पश्चात् पुनः प्रांगण है। इसमें सामने दो मंजिला अंतःपुर है। अंतःपुर का विशाल द्वार कटावदार मेहराब से सुसज्जित है, इसमें ड्योढ़ी के पश्चात् आंगन है इसके चारो ओर दालान एवं तत्पश्चात् अंतः कक्ष थे। इसमें स्थान स्थान पर मुगल शैली के अनुरूप दीपकों की सजावट हेतु लघु आलों के समूह बने हैं। यह महल पूर्णतः जीर्णशीर्ण हो गया है। कहीं कहीं चित्रों के अवशेष हैं इनसे ज्ञात होता है कि यह महल चित्रित भी था। अंतःपुर के बांयो ओर अस्तवल था, इसमें विशाल आंगन के तीन ओर खुले दालान थे। इन दालानों पर चौड़े खपरैल (यूरोपीय शैली) की छत थी। इस महल को अत्याधिक सुन्दर एवं समस्त सुविधाओं से परिपूर्ण बनाया गया था इसके पीछे विशाल उद्यान (मेहन्दी बाग) था।

मंदिर

इस क्षेत्र के निवासियों में राजनैतिक चेतना के अतिरिक्त धार्मिक आस्था एवं विश्वास प्राचीनकाल में ही परिपक्व हो गये थे। बेतवा के तट पर स्थित एक

कक्षीय शिखर विहीन प्रारम्भिक गुप्तकालीन मन्दिर इस क्षेत्र का प्राचीनतम मन्दिर है, इसके वितान पर कमल का अंकन है। जरायमठ इस क्षेत्र का प्रतिहार कालीन भव्य मंदिर[7] है। चन्देलकाल में इस क्षेत्र में अनेक मन्दिरों का निर्माण हुआ, इनमें रेलवे बाँध के समीप का मन्दिर[8] अत्यंत महत्वपूर्ण था। इष्टिका निर्मित इस मन्दिर के द्वार स्तम्भ तथा शीर्षदल पाषाण के थे। मन्दिर नष्ट हो चुका है परन्तु नीव का आकार स्पष्ट है। यहाँ से द्वार स्तम्भ, शीर्षदल तथा दहलीज के स्थापत्यीय खण्डों के अतिरिक्त बड़े आकार (लम्बाई = 40 सेन्टीमीटर, चौड़ाई = 24 सेन्टीमीटर तथा मौटाई = 7 सेन्टीमीटर) की ईटों का ढेर प्राप्त हुआ है। द्वार स्तम्भ[9] पर पाँच रूप पट्टिकाओं में लतापत्र, सर्परज्जु, मिथुन आकृतियाँ स्तम्भ तथा पुष्पों का अंकन है। शीर्षदल[10] पर शिवलिंग पूजन, नवग्रह तथा दहलीज[11] के पाषाण खण्ड पर मंगल घट एवं सिंह अंकित हैं। इसी प्रकार के इष्टिका एवं पाषण निर्मित मन्दिरों के अवशेष खजुराहो[12] से प्राप्त हुए हैं। लहरग्राम का देवी मन्दिर भी चन्देलकाल में विद्यमान था इसका मण्डप प्राचीन है अन्य भाग नष्ट हो गये होंगे अत: कालान्तर में पुन: निर्मित किये गये हैं।

बुन्देला काल में झाँसी लघुबस्ती था, मराठा काल में नगर विस्तार तथा जनसंख्या वृद्धि के साथ ही साथ यहाँ अनेक भव्य मन्दिरों का निर्माण हुआ। झाँसी नगर के महत्वपूर्ण मन्दिर:-

महालक्ष्मी मन्दिर

नगर के बाहर पूर्व दिशा में समृद्धि एवं सम्पन्नता की देवी महालक्ष्मी का मन्दिर लक्ष्मी सरोवर में स्थित है। इस दो मन्जिले मंदिर में पहुँचने हेतु पुल है। नीचे की मंजिल जगती के रूप में निर्मित हैं इसमें अनेक कक्ष एवं दालान हैं। ऊपर की मंजिल में जाने हेतु सामने से जीना है, द्वार की गोल मेहराब पर कटावदार मेहराब का अलंकरण है इसके ऊपर धनुषाकार वितान के दोनो ओर कमल पंखुड़ियों से सुसज्जित लघु गुम्बज है। ऊपर की मंजिल में लघुप्रांगण के चारो ओर दालान है तथा मध्य में गर्भगृह है। गर्भगृह का गुम्बज अधोमुख कमल, चक्र, कलश तथा कमल से सुशोभित है। गर्भग्रह में महालक्ष्मी की प्रतिमा प्रतिष्ठापित है। मन्दिर के बाहर दीप स्तम्भ है। नेवालकर राजवंश के प्रथम सूबेदार रघुनाथ राव द्वितीय (1769 ई० 1796 ई०) ने इस मन्दिर का निर्माण करवाकर अपनी कुल देवी महालक्ष्मी की प्रतिष्ठापना करवायी

थी। राजा गंगाधर राव ने इस मन्दिर के प्रबन्ध हेतु 4900 नानाशाही रुपये राजस्व की आमदनी वाले दो ग्राम कोछाभांवर तथा गोरामाछिया देवी[13] को अर्पित किये थे। सनदजारी करके राजा गंगाधर राव ने इस मंदिर का सम्पूर्ण प्रबन्ध झाँसी के शासक परिवार को सौप दिया था। राजा की मृत्योपरान्त रानी लक्ष्मीबाई मन्दिर का प्रबन्ध करतीं थी। झाँसी राज्य के विलय के पश्चात् कम्पनी सरकार ने इन ग्रामों को अधिग्रहित[14] कर लिया अत: मन्दिर के प्रबन्ध हेतु अर्थाभाव उत्पन्न हो गया इससे रानी एवं झाँसी के नागरिक अंग्रेजों से अत्याधिक रूष्ट हो गये। इसके पश्चात् रानी अपने धन से मन्दिर की व्यस्था करने लगीं। स्वातंत्य युद्ध में अंग्रेजी सेना ने मन्दिर के बहुमूल्य वस्त्राभूषण लूट[15] लिये।

रघुनाथ जी का मंदिर

झाँसी नगर के मध्य ऊँची जगती पर रघुनाथ जी का मंदिर स्थित है। जगती में प्रदक्षिणापथ था। मंदिर में प्रवेश हेतु विशाल सिंहद्वार है, जीना चढ़कर वहाँ पहुँचते हैं। सिंहद्वार तीन दरवाजो वाली गोख से मण्डित है, गोख का वितान धनुषाकार है। इसके दोनों पार्श्वों में चौकोर गुम्बज से अलंकृत लघुद्वार भी है। जगती के चारो कोनों पर एक एक अष्टकोणीय, गुम्बज से आच्छादित बुर्ज है। मण्डप सहित गर्भगृह जगती के बीचो बीच बना है इसकी दीवारें लगभग एक मीटर मोटी है, मेहराब कटावदार हैं। गर्भगृह उत्तुंग चौकोरे शिखर से विभूषित है इसके केन्द्र पर अधोमुख कमल तथा कलश था। इस प्रकार का विशिष्ट चौकोरे शिखर बुन्देलखण्ड. में अन्यत्र नहीं है। गर्भग्रह में भगवान राम सीता तथा भगवान कृष्ण की प्रतिमायें हैं ये अष्ट धातु की हैं। इस मंदिर में राम लक्ष्मण तथा सीता की प्रतिमायें थी, 1857 ई० के स्वातंत्य युद्ध में यह मंदिर भी लूटा गया था, लुटेरे लक्ष्मण की प्रतिमा भी उठा ले गये इसी समय कृष्ण प्रतिमा मंदिर के बाहर प्राप्त हुयी अत: उन्हें गर्भगृह में प्रतिष्ठापित कर दिया गया था। सूबेदार रघुनाथराव द्वितीय (1769 ई० 1796 ई०) ने इस मंदिर का निर्माण करवाया था उनके नाम के अनुरूप श्री रामसीता का यह मंदिर रघुनाथ जी का मंदिर कहलाता है।

मुरली मनोहर जी मंदिर

बुन्देला स्थापत्य की विशिष्ट मेहराबें झाँसी दुर्ग के अतिरिक्त इस नगर के अन्य किसी स्मात्क में नहीं है परन्तु इस मंदिर में देखने को

मिलती है । इससे स्पष्ट है कि इसका निर्माण मराठा शासन के प्रारम्भिक काल में ही हो गया था । और इसका निर्माता झाँसी का प्रथम मराठा प्रशासक नारोशंकर था । यह झाँसी के प्राचीन मंदिरों में विशालतम एवं भव्य है । इस मंदिर को राजकीय सेवायें प्राप्त थी रानीलक्ष्मीबाई यहाँ पूजन अर्चन हेतु आतीं थी । वर्तमान में किये गये जीर्णोद्धार के फलस्वरूप इसका प्राचीन स्वरूप परिवर्तित हो गया है तथापि इसके अनेक भाग अपने मूल रूप में हैं ।

दो मंजिले भव्य मन्दिर का प्रवेशद्वार विशाल है इसके दोनो पार्श्वों में एक एक रथिका तथा उनके ऊपर छज्जे सहित लघु झरोखा बनाया गया था । प्रवेश द्वार के ठीक ऊपर (दूसरी मंजिल में) तीन लघुद्वारों का समायोजन है । दो मंजिले के ऊपर गजसुण्ड तथा सिंह मुख फब्वारों का समायोजन था इनसे मुख्य द्वार पर जल झरता था । फब्बारे नष्ट हो चुके हैं परन्तु छत पर जलसंग्राहक (हौज) जलप्रणालियाँ तथा दीवारों के अन्दर लगायी गयी मृण्य नलिकायें (मिट्टी के पाइप) विद्यमान है जो फब्बारों को गतिशील रखते थे । इस प्रकार मंदिर का सम्मुख भाग अत्यंत सुन्दर एवं भव्य बनाया गया था ।

प्रवेश ड्योढ़ी के पश्चात् चारो ओर से घिरा हुआ लघु आंगन (इसे टीन से ढँक दिया गया है) है । दक्षिणी दालान के पीछे मण्डप (दालान के सदृश) तथा उसके पश्चात् गर्भगृह है । गर्भगृह में मुरलीधर श्री कृष्ण हैं यहां राधा के अतिरिक्त महाराष्ट्रीय परम्परा के अनुरूप रुक्मिणी का विग्रह भी स्थापित है । इस मन्दिर के दूसरे मंजिल में कक्षों एवं दालानों का समायोजन है ये अपने मूलरूप में हैं उनमें कटावदार तथा सादा मुगल मेहराबों के अतिरिक्त विशिष्ट बुन्देला मेहराब भी निर्मित किये गये हैं । यहाँ टूड़ों को पुष्प पत्रों से अलंकृत कर मयूर तथा शुक के रूप में बनाया गया है ।

इस मन्दिर के गर्भगृह पर गुम्बज अथवा शिखर नहीं है अपितु (तीसरे मंजिल के रूप में) एक लघु बारहदरी का निर्माण किया गया है प्रत्येक दिशा में इसके तीन द्वार हैं । इस प्रकार से शिखर के स्थान पर बारहदरी किसी भी स्मारक में नहीं है । इस मन्दिर में भित्ति चित्रण था जो पूर्णतः समाप्त हो चुका है । प्रथम स्वातंत्र्य युद्ध में अंग्रेज सैनिकों ने इस मन्दिर को भी लूट लिया था ।

गणेश मन्दिर

मराठों ने अपने इष्टदेव गणपति का भव्य मन्दिर अपने नवीन राज्य की राजधानी झाँसी में बनवाया था। मुरली मनोहर तथा गणेश मन्दिर में अनेक समानतायें हैं, दोनों ही मन्दिर दो मंजिल के हैं यद्यपि गणेश मन्दिर की दूसरी मंजिल कहीं कहीं नष्ट हो गयी है। दोनो मन्दिरों में प्रवेश द्वार के दोनो पार्श्वों में एक एक रथिका एवं दूसरी मंजिल पर गवाक्ष शैली के झरोखे थे। गणेश मन्दिर का प्रवेश द्वार कटावदार मेहराब से सुसज्जित है। प्रवेश ड्योढ़ी के पश्चात् लघु आंगन है, आंगन एवं गर्भगृह के मध्य विशाल मण्डप है। मण्डप की ऊँचाई दो मंजिल के बराबर है परन्तु इसके दोनों पार्श्वों में स्थित दालान एक मंजिले हैं। मण्डप का वितान लता पत्र की पंक्ति से चित्रित है। मण्डप की चारो दीवारें बहुत मोटी (लगभग एक मीटर) हैं पार्श्व के दालानों एवं मण्डप के मध्य कटावदार मेहराबों के बड़-बड़े द्वार है इन द्वारों के ऊपर गोल महराबों वाले सुन्दर द्वारों से संयोजित वीथिका है, इस प्रकार की वीथिका सम्मुख एवं पृष्ट दीवार पर भी है। पार्श्व के दालान की छत से वीथिका में पहुँच सकते हैं, इसमें बैठकर विशिष्ठ महिलायें मण्डप में आयोजित धार्मिक कार्यक्रम का अवलोकन करती होंगी। इस प्रकार की वीथिका से समायोजित मण्डप बुन्देलखण्ड में अन्यत्र नहीं है, यह स्थापत्य में इस क्षेत्र के लिये मराठों की नवीन देन थी।

गर्भगृह में गणेश का विग्रह ऋद्धि, सिद्धि सहित प्रतिष्ठापित है। इसके शिखर का जीर्णोद्वार हो चुका है अतः उसके विषय में कुछ नहीं कहा जा सकता।

महाकाली मन्दिर

लक्ष्मी ताल के तट पर एक कक्षीय मन्दिर में देवी महाकाली का विग्रह प्रतिष्ठापित है। ऊँची जगती पर निर्मित मन्दिर बुन्देला शैली के भव्य गुम्बज से अलंकृत है।

कामाक्षा देवी मन्दिर

झाँसी नगर के उत्तर पूर्व में कैमासिन की पहाड़ी पर बुन्देला शैली की विशेषताओं से परिपूर्ण कामाक्षादेवी का मन्दिर है। इस मन्दिर के बाहर दीप स्तम्भ है।

जयेश्वर महादेव मन्दिर

झाँसी 1861 ई० से 1886 ई० तक ग्वालियर राज्य के द्वारा शासित रहा

था । झरना द्वार के समीप ग्वालियर के महाराजा ने एककक्षीय मन्दिर में वाणलिंग स्थापित कराया था । इस मन्दिर में लगे हुये अभिलेख से ज्ञात होता है कि श्रीमंत महाराजाधिराज श्री जयाजीराव सींदे आलीजाबहादुर ने सम्वत् 1920 (1863 ई॰) श्रावण शुक्ल त्रयोदशी को जयेश्वर महादेव[16] की स्थापना वेद विधि से करवायी थी । मंदिर बुन्देला स्थापत्य शैली में निर्मित है ।

शिवमंदिर सैय्यर

सैय्यर[17] ग्राम में उत्तुंग पर्वत शिखर पर बुन्देला स्थापत्य शैली की विशषताओं से परिपूर्ण एककक्षीय मन्दिर में देवाधिदेव महादेव वाणलिंग के रूप में प्रतिष्ठापित है । मंदिर के सम्मुख कमल पंखुड़ियों से आवृत्त गुम्बज वाले नन्दी मण्डप में नन्दी विराजमान है, नन्दी की पीठ पर पड़ा हुआ वस्त्र भी कमल पंखुड़ियों से सुसज्जित है, प्रतिमा पर इस प्रकार के अलंकरण का यह एक मात्र उदाहरण है । श्रावण वदी सप्तमी सम्वत् 1847 (179० ई॰) का एक अभिलेख मंदिर के बाहर रखा है अत्याधिक घिसा हुआ है अत: पढ़ना सम्भव नहीं है ।

हनुमंत निवास

झाँसी में बड़ागांव दरवाजा बाहर हनुमंत निवास स्थित है । मंदिरों एवं उद्यान से परिपूर्ण इस परिसर में प्रवेश हेतु विशाल सिंहद्वार है । यहां बुन्देला स्थापत्य का एक शिव मंदिर है, इसके गर्भगृह के चारो ओर मेहराबों पर आधारित प्रदक्षिणा पथ है । प्रदक्षिणा पथ की दक्षिणी, मध्य मेहराब के ठीक ऊपर दो सर्पों के मध्य सूर्य (ग्वालियर के सिन्धिया वंश का राजचिन्ह) अंकित है, इससे स्पष्ट होता है कि इस मन्दिर का निर्माण 1861 ई॰ से 1886 ई॰ के मध्य हुआ होगा जब झाँसी ग्वालियर राज्य का भाग था गर्भगृह में चतुर्मुखी शिवलिंग तथा अन्य देवी देवताओं की प्रतिमायें है, भित्ति चित्र नष्ट हो गये है ।

इसी परिसर में लघु गर्भगृह तथा प्रदक्षिणा पथ से समायोजित एक हनुमान मन्दिर भी है । इस मंदिर के प्रदक्षिणा पथ की दक्षिणी मध्यवाली मेहराब के ऊपर लघु अभिलेख है । इस अभिलेख से ज्ञात होता है कि हनुमान मन्दिर का निर्माण मिती वैशाख सुदी द्वितीय सम्वत् 1972 में करवाया गया था । इसी प्रकार का अभिलेख परिसर के सिंहद्वार पर भी लगा है सिंहद्वार पर लगे एक अन्य अभिलेख में हनुमंत

निवास उत्कीर्ण है । प्रतीत होता है कि सिन्धिया कालीन शिवमंदिर के समीप सम्वत् 1972 = 1915 ई० में हनुमान मन्दिर का निर्माण करवाकर तथा उद्यान से सुसज्जित कर इस क्षेत्र को एक सुन्दर परिसर के रूप में विकसित किया गया था । तत्पश्चात् यह हनुमंत निवास के नाम से प्रसिद्ध हुआ ।

मार्कण्डेय शिव मंदिर

लक्ष्मीताल के पूर्वी तट पर सोनेराव की बगिया में यह मन्दिर स्थित है ऊँची जगती पर स्थित इस मंदिर में लघु गर्भगृह तथा उसके चारो ओर दालान सदृश प्रदक्षिणा पथ का समायोजन है । गर्भगृह दो मंजिला है तत्पश्चात् गुम्बज से आवृत्त है । इसका गुम्बज मुगल शैली (शलजम के आकार) का है । बुन्देला स्थापत्य के अनुरूप इसके चारो कोनो पर लघु मन्दिर तथा दो लघु मंदिरों के मध्य एक धनुषाकार वितान वाले द्वार बनाकर इसे सुसज्जित किया गया है । धनुषाकार वितान कमल पंखुड़ियों से आवृत्त हैं । मुख्य गुम्बज का केन्द्र अधोमुख कमल मणिचक्र कलश एवं कमल से विभूषित है । यह झाँसी के स्मारकों में मात्र एक ही मंदिर ऐसा है जो मुगल शैली के गुम्बज से आवृत्त है । प्रदक्षिणा पथ की छत चपटी (पटियों से बनी) है ।

गर्भगृह में शिव द्वारा मार्कण्डेय की प्राण रक्षा का शिल्पांकन है । चतुर्भुजी शिव नरमुण्डमाला धारण किये, लिंग से प्रकट होते रूपायित हैं देव का मुख एवं तीन हाथ खण्डित हैं चौथा हाथ लिंग पर स्थिर है । महिषारूढ़ यमराज भी चतुर्भुजी है, सामान्य दोनो हाथ नमस्कार मुद्रा में तथा अतिरिक्त हार्थ खण्डित हो चुके हैं । यमराज मुकुट एवं हार से अलंकृत है । शिव प्रतिमा श्वेत संगमरमर की है तथा महिष सहित यमराज काले पत्थर का है । समीप ही खण्डित मार्कण्डेय है ।

भगवान शिव ने अपने परम भक्त अल्पायु मार्कण्डेय के जीवन की रक्षा की, यह कथा पद्मपुराण18 में वर्णित है यह शिल्पांकन पौराणिक कथा के अनुरूप किया गया है । गर्भगृह एवं प्रदक्षिणा पथ भली भाँति चित्रित है, चित्र नष्ट हो रहे हैं परन्तु अपने विगत वैभव की झलक देने में सक्षम हैं ।

मस्जिद

झाँसी के मराठा राज्य में इस्लाम के अनुयायियों को यथेष्ठ मान सम्मान प्राप्त था। अपने विश्वास के अनुरूप इबादत करने एवं परम्पराओं का पालन करने हेतु वे स्वतंत्र थे। अन्य स्मारकों की भाँति यहाँ की मस्जिदें भी बुन्देल – स्थापत्य शैली में निर्मित हैं। झाँसी की प्राचीन मस्जिदें --

नवाब साहब की मस्जिद

नगर में स्थित यह मस्जिद एक के पीछे दूसरा, दो विशाल दालानों से समायोजित हैं। दालानों के द्वारो की मेहराबें गोल हैं, मेहराबों के सिरे घुन्डीनुमा बनाये गये हैं। पिछले दालान की छत पर तीन विशाल गुम्बज अष्टकोणीय आधारों पर स्थापित हैं। गुम्बजों के केन्द्र पर बुन्देला स्थापत्य के अनुरूप अधोमुख कमल, चक्र कलश तथा कमल का समायोजन है। चारो कोनों पर एक एक मीनार बनाकर मस्जिद को पूर्णता प्रदान की गयी है। पृष्ठ दीवार पर मध्य में दो मीनार बनाये गये हैं। इनके ठीक नीचे (दोनों मीनारों के मध्य) मुख्य उपासना स्थल है। सम्मुख दीवार पर बीचोबीच धनुषाकार वितान बनाकर इसे सौन्दर्य प्रदान किया गया है।

यह नवाब साहब की मस्जिद कहलाती है परन्तु नवाब साहब के विषय में ज्ञान नहीं है। कालान्तर में एक नाबीना संत (सूरदास) यहां रहा करते थे अतः इसे नाबीना की मस्जिद भी कहते हैं।

मस्जिद अलीगोल खिड़ी बाहर

अलीगोल खिड़की के इर्द गिर्द पठानों सय्यदों की बस्तियाँ थीं। इस खिड़की (लघुद्वार) के बाहर एक प्राचीन मस्जिद है, यहाँ भी तीन विशाल गुम्बज एवं चारो कोनों पर एक एक मीनार है। ये गुम्बज बुन्देला स्थापत्य शैली के हैं।

मस्जिद नवाब अली बहादुर

झाँसी के राजा रघुनाथ राव तृतीय तथा उनकी प्रेयसी गजरा बेगम के पुत्र अली बहादुर ने अपने निवास चाँद दरवाजा के निकट इस विशाल मस्जिद का निर्माण

बुन्देला स्थापत्य शैली में करवाया था। यह मस्जिद भी तीन विशाल गुम्बजों तथा चारो कोनो पर एक उत्तुंग मीनार से समायोजित है।

गिरजाघर

ईसाई धर्म का आगमन झाँसी में अंग्रेजों के साथ ही हुआ था। नगर स्थित सिटी–चर्च तथा सैनिक छावनी का सेंट मॉर्टिन्स चर्च झाँसी के प्राचीनतम गिरजाघर हैं।

सिटी चर्च

गोथिक स्थापत्य शैली में निर्मित इस चर्च का शिलान्यास 1889 ई० हुआ19 था। इसमें दो (जन सामान्य के बैठाने के स्थान) आउटर हैं ऑल्टर (वेदि) सामान्य ऊँचाई की है। आउटर के दक्षिण एवं पश्चिम में बराम्दा है। पश्चिम में स्थित चौकोर लघु कक्ष (ऊँचाई तीन मंजिल) में घण्टा लगा हुआ है, यह कक्ष अष्टकोणीय उत्तुंग शिखर से अलंकृत है जिसके चारो कोनो पर एक एक चौकोर लघु गुम्बजनुमा संरचना है। शिखर के केन्द्र पर आमलक स्थापित है इसके ऊपर सम्भवत: सलीब का अलंकरण रहा होगा (क्योंकि लौह छड़ विद्यमान है) चर्च को भव्यता प्रदान करने वाले इस खर 20 का निर्माण 1891 ई० में पूर्ण हुआ था। इसकी वाह्य दीवारें प्लास्टर रहित हैं, परन्तु भलीभाँति पकाई गयी ईटों को कुशलता पूर्वक चूने द्वारा चिनाई करके इसका निर्माण किया गया था अत: यह चर्च अत्यंत सुन्दर दृष्टिगोचर होता है। मिट्टी के टाइल्स (योरोपीय शैली के) द्वारा इसकी छत बनाई गयी है।

सेन्ट मॉर्टिन्स चर्च

19 मार्च 1898 ई० को शिलान्यास21 करके ब्रिटिश सेना के लिये झाँसी की सैनिक छावनी में इस भव्य चर्च का निर्माण किया गया था। दो मंजिल की ऊँचाई वाली इसकी प्रवेश ड्योढ़ी चौकोर लघु कक्ष के सदृश है। ड्योढ़ी के पश्चात् आउटर का निर्माण विशाल हॉल से रूप में किया गया है इसके दोनों पार्श्वों में एक एक वीथिका है। वीथिकाओं एवं आउटर के मध्य छत को सहारा देने के लिये विशाल अष्टकोणीय स्तम्भों पर अधारित मेहराबें हैं। आउटर के दूसरे सिरे पर स्थित

आॅल्टर (वेदि) विशिष्ट भव्यता के साथ निर्मित किया गया है। आॅल्टर की पृष्ठ दीवार में विशाल मेहराब है जो तीन अपेक्षाकृत लघु मेहराबों में विभक्त है इनके कांच पर चित्र हैं। मध्य के मेहराब में ईसामसीह है पार्श्व के दोनो मेहराबों में एक एक नर नारी भक्त नमस्कार मुद्रा में अपने प्रभु की ओर निहार रहे हैं। नीचे के तीनों हिस्सों में एक एक रोमन सैनिक सुसुप्तावस्था में अंकित है यह सम्पूर्ण चित्रण अत्यंत सुन्दर एवं भव्य है।

गोथिक स्थापत्य शैली के इस चर्च का निर्माण तराशे गये स्थानीय कणाश्म पाषण खण्डों (ग्रेनाइट) से किया गया है परन्तु मेहराबों स्तम्भों तथा झरोखों को बनाने में उच्चकोटि के श्वेत बलुये पाषाण (सेंडस्टोन) का उपयोग किया गया है। वाह्य दीवारें सिटी चर्च की भाँति प्लास्टर रहित हैं परन्तु कणाश्म तथा तथा बलुये पत्थर का संयोजन इस चर्च को सौन्दर्य प्रदान करता है। इसकी छत मिट्टी के टाइल्स (योरोपीय शैली के) से निर्मित है। टाइल्स के नीचे काष्ट का[22] वितान (सीलिंग) बनाकर इसे आकर्षक बनाया गया है।

गोसांइयों के स्मारक

जगतगुरू आदि शंकराचार्य के चार प्रधान शिष्य थे-- पद्मपाद, हस्तामलक मण्डन और तोटक। इनमें पद्मपाद के दो शिष्य थे-- तीर्थ और आश्रम, हस्तामलक के भी दो शिष्य वन और आरण्यक थे। गिरि, पर्वत एवं सागर ये मण्डन के शिष्य थे। इसी प्रकार तोटक के तीन शिष्य ररस्वती भारती तथा पुरी थे। इन्हीं दस शिष्यों के नाम से संन्यासियों के दस वर्ग स्थापित हुये सम्मिलित रूप से ये सभी गोसांई कहलाते थे। ये संन्यासी अध्यात्मिक शक्ति के अतिरिक्त धर्मरक्षार्थ शस्त्र भी धारण करते थे। शस्त्रधारी होने के कारण इनमें राजनैतिक महात्वाकांक्षायें जागृत हुयी इसके फलस्वरूप सत्रहवीं शताब्दी में ये एक सैनिक शक्ति के रूप में संगठित हो गये। इस संदर्भ में राजेन्द्र गिरि तथा उनके शिष्य अनूपगिरि एवं उमराव गिरि का नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय है। अनूपगिरि की शूरवीरता

से प्रभावित होकर अवध के नवाबशुजाउद्दौला ने उसे हिम्मत बहादुर की उपाधि प्रदान की थी। अवध के नवाव के अतिरिक्त ग्वालियर के महाराजा महाद जी सिन्धिया तथा बांदा के नवाब अली बहादुर को भी अनूपगिरि ने अपनी सैनिक सेवायें अर्पित की थीं। अनूपगिरि हिम्मत बहादुर ने अपने पराक्रम को प्रदर्शित करते हुये बुन्देलखण्ड के अनेक युद्धों में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह किया था। ईस्ट इण्डिया कम्पनी ने अंत में इसकी सहायता प्राप्त की तथा महाराजा बहादुर[23] की उपाधि सहित मौदाह छौन एवं हमीरपुर जागीर में प्रदान किये! अनूपगिरि हिम्मत बहादुर की मृत्यु 1804 ई० हो गयी ततपश्चात् उसका पुत्र निरंदगिरि उसकी जागीरों का स्वामी हुआ। निरद्रगिरि के 1840 ई० में स्वर्गवासी हो जाने के पश्चात् जागीरें कम्पनी राज्य में सम्मिलित कर[24] उसके परिजनों को पेन्शन दे दी गयी।

गोसांइयों की अन्य शाखाओं में से एक झांसी पर बुन्देलों के प्रतिनिधि के रूप में शासन कर रही थी। महाराजा मल्हार राव होल्कर के सेनापतित्व में मराठों ने 1735 ई० में बुन्देलों पर आक्रमण किया इसका लाभ उठाते हुये झाँसी[25] के (बुन्देलों के प्रतिनिधि) प्रशासक इन्द्रगिरि गोसांई ने मोठ में अपने लिये एक छोटासा स्वतंत्र राज्य स्थापित कर लिया।

यद्यपि 1742 ई० में मराठा शासन की स्थान: हो जाने से इस क्षेत्र में गोसांइयों की राजनैतिक शक्ति समाप्त हो गयी तथापि उनका धार्मिक सामाजिक[26] वर्चस्व पूर्ववत् बना रहा। नये शासन ने गोसांइयों के महत्व को स्वीकार किया, झाँसी के प्रथम मराठा प्रशाशक नारोशंकर ने गोसांई महान्तों को भूमिदान (चित्र क्रम 14) तथा अन्य सुविधायें प्रदान कर सम्मानित किया था। गोसांई असिजीवी थे अत: झाँसी राज्य की सेना में उन्हें महत्वपूर्ण पद प्राप्त हुये गणपति गिरी[27] रानी लक्ष्मीबाई की सेना का गोसांई सेनानायक था। उसके नाम से नगर कोट की एक खिड़की (लघुद्वार) गणपत खिड़की कहलाती है।

गोसांइयों ने अपके निवास हेतु विशाल मठों तथा पूजा अर्चन हतु मन्दिरों का निर्माण करवाया था। मूलत: गोसांई सन्यासी थे अत: इनके शवों का अग्नि संस्कार

न करके उन्हें समाधिस्थ किया जाता था। इनकी समाधियों पर मंदिर बनाकर शिवलिंग स्थापित करने की परम्परा थी। झाँसी गोसांईयों का केन्द्र था। अतः यहां मन्दिर और विशाल मठ थे तथा विशद् परिणाम में समाधि मन्दिरों का निर्माण भी हुआ था। गोसाइयों के मठों एवं समाधि मंदिरों का विवेचना समीचीन होगा।

मन्दिर

दीक्षित बाग का मन्दिर

गर्भग्रह एवं उसके चारो ओर प्रदक्षिणा पथ से समायोजित यह भव्य मन्दिर बुन्देला स्थापत्य का उत्कृष्ट उदाहरण है। इसके गर्भगृह के बीचोबीच भव्य सहस्रलिंग तथा आलों में अन्य देवी देवताओं के विग्रह प्रतिष्ठापित हैं। प्रदक्षिणा पथ में विष्णु के दसावतार हैं। मध्यकाल में दसावतारों में बलराम अंकित किये जाते थे परन्तु यहाँ बलराम के स्थान पर श्रीकृष्ण का अंकन है। कच्छप समुद्रमंथन के रूप में रूपायित है। मन्दिर के बाहर, सामान्य लिंग के सर्वोच्च भाग पर पंचवृत्तलिंग (चित्रक्रम 11) स्थापित है। ये प्रतिमायें प्रतिमा विज्ञान तथा धार्मिक दृष्टि से अत्यंत महत्वपूर्ण हैं। बुन्देला काल (1735ई० के पूर्व) में झाँसी के प्रशासक, राजा इन्द्रगिरि गोसांई ने एक भव्य धार्मिक कार्यक्रम "सर्वस्वदान" का आयोजन कर रतन जू दीक्षित28 को यह मन्दिर उद्यान तथा अन्य बहुमूल्य वस्तुयें दान में दी थी।

पानी की धर्मशाला का शिवालय

दीक्षितबाग के मन्दिर में स्थापित सहस्रलिंग के सदृश सहस्रलिंग इस शिवालय में स्थापित है तथा परिमाण में दोनो सहस्रलिंग पूर्णतः समान हैं, प्रतीत होता है कि इन का निर्माण एक ही कलाकार ने किया था। गर्भगृह के आलों में अन्य देवी देवताओं की प्रतिमायें प्रतिष्ठित हैं। इस शिवालय के लघुमण्डप के वितान पर चित्रित मराठाकालीन चित्रों में शेषशायी विष्णु (चित्रक्रम 12) विशेषरूप से उल्लेखनीय है।

लक्ष्मी ताल का शिव मन्दिर

यह मन्दिर भी बुन्देला स्थापत्य की विशेषताओं के परिपूर्ण है। गर्भगृह में काले पाषाण के अर्घ पर बाणलिंग प्रतिष्ठापित है। प्रदक्षिणा पथ तथा गर्भगृह के

वाह्य छज्जे के टूड़ों के मध्य देवी देवताओं के सुन्दर लघु चित्र हैं । यह सिद्ध के मन्दिर (चित्रक्रम6) के नाम से भी जाना जाता है ।

मठ

नगर के गोसांईपुरा मोहल्ले में बड़ा मठ तथा छोटा मठ के नाम से बिख्यात गोसांइयों के दो मठ थे । दोनों ही मठों का मलरूप परिवर्तित हो गया है, इनके कुछ ही भाग अपने प्राचीन स्वरूप में हैं । छोटा मठ के प्रवेश द्वारों पर गणेश की प्रतिमायें हैं । यहां बुन्देला स्थापत्य शैली के लघु मन्दिर में पंचमुखी शिवलिंग प्रतिष्ठापित है यह शिवलिंग छनिया पुरा में स्थित पचमुखी शिवलिंग से पूर्णत: साम्यता रखता है। बड़ा मठ भी पूर्णतः परिवर्तित हो गया है। यहां राज राजेश्वरी दुर्गा देवी का मंदिर है। मढ़िया मोहल्ला में समाधि मन्दिर के निकट भी एक दुर्ग शैली का मठ था, जो वर्तमान में अपना मूल स्वरूप खो चुका है ।

समाधि मन्दिर

झाँसी एवं इसके आसपास अनेक भव्य एवं सुन्दर समाधि मन्दिर हैं। समाधि मन्दिर दो प्रकार के हैं--

(1) इनका निर्माण ऊँची जगती पर निर्मित अधिष्ठान के ऊपर किया गया था। इनमें मण्डप अन्तराल एवं गर्भगृह का समायोजन है । गर्भगृह एवं मण्डप पृथक पृथक उत्तुंग शिखरों से आवृत्त हैं। शिखरों के केन्द्र आमलक कलश मणिचक्र एवं कमल से सुशोभित हैं कतिपय समाधिमन्दिरों में इनके ऊपर त्रिशूल लगे हैं। शिखरों के चारो ओर लघुमन्दिरों का निर्माण कर इन्हें आकर्षक बनाया गया है । दीवार एवं शिखर के मध्य टूड़ों पर आधारित लघु छज्जा बनाया जाता था, टूड़ों के मध्य सुन्दर चित्र बनाये गये हैं कुछ समाधिमन्दिरों के मण्डप एवं गर्भगृह में भी चित्रण है। कतिपय समाधि मन्दिरों की जगती के चारो कोनो पर लघु-मन्दिर निर्मित कर पंचायतन मन्दिर का स्वरूप दिया गया है । कतिपय समाधि मन्दिरों में सिंह द्वार तथा नन्दी मण्डप का भी समायोजन है। समाधि मन्दिरों के गर्भगृहों में काले पाषाण के भव्य शिवलिंग तथा अन्तराल में नन्दी विराजमान हैं ।

कुछ गर्भगृहों में शिवलिंग के अतिरिक्त अन्य देवीदेवताओं की प्रतिमायें भी स्थापित की गयी हैं ।

(2)-- द्वितीय प्रकार के समाधिमन्दिर एककक्षीय चौकोर अथवा अष्टकोणीय आकार के हैं । इस प्रकार के समाधिमन्दिरों पर उत्तुंग शिखर नहीं होता अपितु ये गुम्बजों से सुशोभित हैं। इनमें भी टूड़ों के मध्य चित्रांकन तथा कक्ष में शिवलिंग स्थापितं किये जाते थे। समाधिमंदिरों की सूची:—

क्रमांक	स्थान	समाधिमंदिरों की संख्या	विशेषता
1	मढ़िया मोहल्ला	12	एक विशाल समाधिमंदिर में मूर्तियाँ हैं इसमें विक्रम सम्वत् 1857 (1800ई०) का अभिलेख है, इससे ज्ञात होता है कि यह चिमनापुरी महाराज की समाधि है ।
2	छनिया पुरा	6	दो विशाल समाधिमंदिरों में सुन्दर प्रतिमायें हैं ।
3	सुगन्धपुरी का बगीचा	5	——————
4	सुन्दरपुरी का बगीचा	2	एक समाधि मन्दिर एकक्षीय, अष्टकोणीय विशाल आकार का पंचायतन शैली में निर्मित है । दूसरा उत्तुंग शिखर का है, इनके समीप सहस्रलिंग शिवमंदिर है ये सभी महाकालेश्वर मन्दिर कहलाते है।
5	फूटा चौपड़ा	1	गर्भगृह में चतुर्मुख शिवलिंग तथा अन्य अत्यंत सुन्दर प्रतिमायें हैं।

क्रमांक	स्थान	समाधिमंदिरों की संख्या	विशेषता
6	चौधरी का बाग (लक्ष्मीताल के पूर्वी तट पर)	1	——
7	माहौर का बगीचा (ग्वालियर मार्ग)	1	——
8	पुराना ताड़ीखाना	1	समाधिमंदिर में प्रवेश हेतु विशिष्ट सिंह द्वार है।
9	मदक खाना	3	——
10	कानपुर मार्ग	5	(चित्रक्रम 7)
11	मेहन्दी बाग	1	——
12	आंतिया ताल	4	आंतिया ताल के पश्चिमी तट पर (मार्ग के दूसरी ओर) अत्यंत लघु एक एककक्षीय समाधि मंदिर है अन्य तीन की जगती मात्र अवशिष्ट है।
13	शैंगरपुरी का बगीचा (झांसी कानपुर रेल मार्ग पर गढ़मऊ के पहले पूर्व दिशा में स्थित है)	5	यहाँ स्थित बावड़ी में लगे अभिलेख विक्रम सम्वत् 1838–1781 ई० से ज्ञात होता है कि इसका निर्माण भाण्डेर के महान्त राबोपुरी के शिष्य शैंगरपुरी ने करवाया था।
14	बाबा का अटा (बड़ा गांव द्वार बाहर स्थित लघु ग्राम)	6	——
15	पिछोर (बड़ा गांव द्वार बाहर स्थित ग्राम)	1	बगीचे के द्वार पर 1885 ई० का अभिलेख जो बगीचे कुये तथा दालान के स्वामित्व की जानकारी देता है।

क्रमांक	स्थान	समाधिमंदिरों की संख्या	विशेषता
16	कुमार्रा (झाँसी-ओरछा के प्राचीन मार्ग पर स्थित ग्राम)	4	इस ग्राम में गोसांईयों की गढ़ी के अवशेष भी हैं ।

राजाओं की छतरियां

राजा रामचन्द्र राव की छतरी—

खण्डेराव द्वार बाहर राजा रामचन्द्र राव (1814ई०—1835ई०) की छतरी स्थित है। चौकोर परिसर के मध्य ऊँची जगती पर पूर्णतः सादा एक लघुकक्ष है, इसमें चारो दिशाओं में एक एक द्वार है। परिसर के चारो कोनों पर एक एक लघू गोल बुर्जनुमा संरचना है।

राजा गंगाधर राव की छतरी

वीरांगना रानी लक्ष्मीबाई के पति राजा गंगाधर राव 21 नवम्बर 1853ई० को स्वर्गवासी हो गये थे। लक्ष्मीताल के पश्चिमी किनारे पर दुर्ग शैली के प्रांगण के मध्य निर्मित यह एककक्षीय छतरी है। प्रांगण के चारो कोनो पर एक एक भव्य अष्कोणीय, गुम्बज से आवृत्त बुर्ज है। प्रांगण की प्राचीर पर प्रत्येक दिशा में कमल पंखुड़ियों से आवृत्त धनुषाकार वितान बनाये गये है। उत्तर दिशा के वितान पर दो सिंहों के मध्य राजा गंगाधर राव की प्रतिमा (चूने से) बनायी गयी है। राजा गद्दी पर आसीन हैं, दोनो पैर गद्दी से नीचे लटक रहे है दाहिना हाथ गद्दी पर तथा बायां जांघ पर स्थिर है। राजा के मोहक मुखमण्डल पर श्रमसु है। पगड़ी कुण्डल, एकाबली तथा परिधानों से वे सुसज्जित हैं। झाँसी में अन्य किसी राजपुरुष की प्रतिमा प्राप्त नहीं हुयी अतः राजा गंगाधर राव का यह अंकन अत्याधिक महत्वपूर्ण है।

यह मुगल उद्यानों के सदृश नियोजित प्रांगण के मध्य बलुये पत्थर की बारहदरीनुमा लघु छतरी है इसमें प्रवेश हेतु चारो दिशाओं में तीन तीन द्वार हैं। इन द्वारों के कटावदार मेहराब तथा बहुकोणीय स्तम्भों पर लतापुष्पों एवं कमल पंखु—

ड़ियों को सुन्दरता से उत्कीर्ण किया गया है। इसकी छत सपाट है, इस पर चारो ओर पाषाण लोलकों से अलंकृत छज्जा लगा है। छज्जे के टूड़ों के मध्य बने लघु चित्र समाप्त हो गये हैं। सम्पूर्ण छतरी को कौड़ी के प्लास्टर से श्वेत सुचिक्कन बनाकर चित्रित किया गया था यह छतरी झाँसी की उत्कृष्ट स्थापत्य कला का अद्वितीय उदाहरण है।

सती मंदिर

युद्धों में वीरगति प्राप्त करने वाले योद्धाओं की पत्नियाँ भी उनका अनु-गमन करती थीं उनकी स्मृति में सतीमंदिर के निर्माण की परम्परा देश में प्राचीन-काल से ही लोकप्रिय थी। लक्ष्मीताल के किनारे राजा गंगाधरराव की छतरी के निकट बुन्देला स्थापत्य शैली के अनेक सतीमंदिर हैं इनमें सती पट्ट भी लगे हैं। सती पट्ट पर स्त्री पुरुष की आकृति के अतिरिक्त शिवलिंग, सूर्यचन्द्र तथा आशीर्वाद रूप में उठे हुए हाथ का अंकन भी मिलता है। लक्ष्मीताल के पूर्वीतट पर चौधरी के बाग के समीप भी एक लघु सती मंदिर सती पट्ट सहित है। आंतियाताल के किनारे भी अनेक सती मंदिर हैं।

मकबरे

गजरा बेगम का मकबरा

गजरा झाँसी के राजा रघुनाथ राव तृतीय की प्रियतमा थी अत: रानीमहल तथा झाँसी दुर्ग के मध्य उसका भव्य मकबरा निर्मित किया गया था। दो मंजिले चौकोर कक्ष में बेगम का मजार है इसके चारो ओर एक मंजिले खुले दालान का समायोजन है। विशाल गुम्बज से आवृत्त इस कक्ष में प्रवेश हेतु दक्षिण दिशा में एक द्वार है। गुम्बज के आधार पर चारो कोनो पर एक एक मीनार तथा प्रत्येक दिशा में धनुषाकार वितान वाले लघु द्वारों की अनुकृतियाँ बनायी गयी हैं। धनु-षाकार वितान वाले द्वारों की अनुकृतियों के दोनो पार्श्वों में भी लघु मीना बनाये

गये हैं । गुम्बज के केन्द्र पर अधोमुख कमल है। अन्य अलंकरण नष्ट हो गये हैं।

कक्ष के चारो ओर बने दालान में प्रवेश हेतु प्रत्येक दिशा में तीन द्वार हैं, इनके गोल मेहराबों पर कटावदार मेहराब का अंकन प्लास्टर में बनाकर इन्हें अलंकृत किया गया है। प्रत्येक द्वार के ऊपर (छत पर) एक एक धनुषाकार वितान वाले लघु द्वार की अनुकृति का समायोजन हैं। इनके बीच-बीच में कंगूरे वाली मुड़ेर है। दालान के चारो कोनो पर अष्टकोणीय विशाल मीनारें हैं। मुख्य गुम्बज तथा मीनारों के सभी गुम्वज कमल पंखुड़ियों से पूर्णतः आवृत्त हैं। गुम्बज, मीनारों एव उनपर कमल पंखुड़ियों की सज्जा इस मकबर को भव्यता एवं विशिष्ट सौन्दर्य प्रदान करती है।कमल पंखुड़ियों की सज्जा बुन्देला कला एवं स्थापत्य का महत्वपूर्ण लक्षण है ओरछा स्थित लक्ष्मी मंदिर का गुम्बज भी इसी प्रकार कमल पंखुड़ियों से सुसज्जित है।

अन्य मकबरा

इसी प्रांगण में एक अन्य लघु मकबरा भी है । इस मकबरे के चारो कोनो पर एक एक मीनार तथा बीच में गुम्बज है। गुम्बज का केन्द्र बुन्देला स्थापत्य के अनुरूप अधोमुख कमल, मणिचक्र, कलश एवं कमल से सुशोभित है। इसके समीप कुछ चबूतरे-नुमा मजारें हैं। ये लघु मकबरा तथा मजारें गजरा बेगम के परिजनों की स्मृति में निर्मित किये गये थे।

कब्रिस्तान

अलीगोल खिड़की के बाहर स्थित प्राचीन मस्जिद के समीप पठानों का कब्रिस्तान है, यहाँ उन देशभक्त पठानों की कब्र हैं जो रानी लक्ष्मीबाई के सैनिक थे तथा विलायती कहलाते थे। अनेक कब्रों के तकियों पर स्थापित गुम्बज कमल पंखुड़ियों से सुसज्जित हैं जो बुन्देला स्थापत्य का महत्वपूर्ण लक्षण था।

ब्रिटिश स्मारक

ईस्टइण्डिया कम्पनी एव झाँसी के राजा रामचन्द्र राव के मध्य 1822ई० एवं 1825ई० में सन्धियाँ हुयी इसके पश्चात् झाँसी में अंग्रेजों के राजनैतिक एवं सैनिक

सम्पर्क सूत्र स्थापित हुये। अपनी आवश्यकतानुसार अंग्रेजों ने यहाँ भवन निर्मित करवाये

स्टारफोर्ट

झाँसी के राजा रामचन्द्र राव ने 1825 ई० में अंग्रेजी सेना के एक रिसाले का प्रबन्ध स्वयम् करना स्वीकार लिया था अत: अंग्रेजी सेना का शिविर झाँसी में स्थापित हुआ। अंग्रेजों ने खजाना तथा गोला बारूद सुरक्षित रखने हेतु स्टारफोर्ट का निर्माण करवाया था। भारतीय पैदल सेना के एक हिस्से ने 5 जून 1857 ई० को इस29 दुर्ग की घेराबन्दी करके झाँसी में प्रथम स्वातंत्र्य युद्ध का श्री गणेश किया था। उस समय इस गढ़ में गोला बारुद तथा बन्दूकों के विशाल भण्डार के अतिरिक्त पाँच लाख रुपये का खजाना भी था।

नगर के दक्षिण पूर्व (सैनिक छावनी) में तारे के आकार में निर्मित प्रांगण के मध्य स्थित होने के कारण इसका नाम स्टार-फोर्ट (तारागढ़) है। इस प्रांगण में 19 विशाल कक्ष एक दूसरे से सटाकर दो पंक्तियों में इस प्रकार निर्मित किये गये गये हैं कि सम्पूर्ण भवन का वाह्य आकार अंग्रेजी वर्णमाला के यू अक्षर के सदृश हो गया है। बांये सिरे के कक्ष गोलाई लिये हुये हैं जब कि अन्य सभी कक्ष चौकोर हैं। ये कक्ष विशाल चौकोर गुम्बजों से अच्छादित हैं। गुम्बज ऊपर से चपटे हैं इनमें बीचोबीच बारूद की गैस निकलते रहने के लिये छिद्र बनाये गये थे। इन कक्षों के अतिरिक्त बांयी ओर अलग से इसी प्रांगण में एक अन्य कक्ष है जो आकार में कुछ गोल है।

रेजीडेन्सी

झाँसी की सैनिक छावनी में स्थित इस विशाल एकमंजिले भवन का पोर्च रोमन स्थापत्य के स्तम्भों पर आधारित है। यह भवन एक विशाल हॉल के रूप में निर्मित है

जिसके चारो ओर (कम ऊंचाई का) दालान है, दालान की छत अर्धमेहराब प्रकार से निर्मित है मुख्य भवन की छत पर्याप्त ऊंची है तथा पाषाण शिलाओं से निर्मित है, इसको सहारा देने के लिये बीचबीच में विशाल गोलाकार मेहराब हैं। पूर्वकाल में यह

छत काष्ट निर्मित थी पुराने लकड़ी के शहतीर अपने स्थान पर अब भी विद्यमान हैं । यह ईस्ट इण्डिया कम्पनी के असिस्टेन्ट पॉलिटिकल एजेन्ट का कार्यालय । था वर्तमान में यहां जजेज कोर्ट है ।

मैमोरियल सिमेट्री

जून 1857 ई० में झाँसी में स्वातंत्र्य युद्ध प्रारम्भ होने पर मारे गये यूरोपियन्स एवं आँग्ल भारतीयों की स्मृति में ब्रिटिश सरकार ने मैमोरियल सिमेट्री का निर्माण करवाया था, यह पाषाण निर्मित सुन्दर अष्टकोणीय कक्ष है । आठों कोणों पर ब्रिटिश शैली के तिकोनें शीर्ष वाले द्वार रूपायित हैं परन्तु प्रवेश द्वार चार ही हैं जो प्रत्येक दिशा में एक है । अन्य चारों कोणों पर एक-एक स्तम्भ का समायोजन है, जो आपस में शीर्षदलों के द्वारा जुड़े हैं प्रत्येक स्तम्भ पर एक फूलदान बना है । कक्ष गुम्बज से आवृत्त है । प्रत्येक कोण से प्रारम्भ हुयी ऊभरी हुयी पट्टी गुम्बज के केन्द्र तक निर्मित है, इसके अतिरिक्त गुम्बज के केन्द्र पर कलात्मक सलीब स्थापित कर इसे सुन्दर बनाया गया है । कक्ष में अभिलेखों पर मारे गये व्यक्तियों के नाम अंकित थे वर्तमान में वे अभिलेख सैनिक छावनी झाँसी स्थित रिसाला कब्रिस्तान में रखे हुये हैं ।

अंग्रेजों का कब्रिस्तान

1 अप्रेल तथा 3 अप्रेल 1858 को बेतवा तथा झाँसी के युद्धों में मारे गये एच० एम० रॉयल रेजीमेन्ट के सैनिकों तथा अधिकारियों को (बरूआसागर मार्ग के निकट) इस कब्रिस्तान में दफन किया गया था । इस परिसर के मध्य में अष्टकोणीय विशाल स्तम्भ है, इसके प्रत्येक कोण पर योरोप की गोथिक स्थापत्य शैली की मेहराब वाले द्वार की लघु अनुकृति है, तत्पश्चात् स्तम्भ अपर की ओर शनैः सकराबनाकर अंत में नुकीले सर्वोच्च भाग के रूप में निर्मित किया गया है। इसके इर्दगिर्द अनेक कब्रें हैं उन पर चौकोर स्मृति स्तम्भ हैं जो ऊपर की ऊपर सकरे हैं तथा इनके सर्वोच्च भाग सपाट हैं । प्रत्येक स्तम्भ पर अभिलेख थे जो वर्तमान में रिसाला कब्रिस्तान में लगे हुये हैं । स्मृति स्तम्भ तथा समस्त कब्रें ईंटों से निर्मित हैं उनपर चूने का प्लास्टर किया गया था ।

ग्रेव ऑफ मेजर एफ० डब्लू पिकने

प्रथम स्वातन्त्य युद्ध के पश्चात् 1858 ई० में ही झाँसी ललितपुर जालौन तथा हमीरपुर जिलों को झाँसी डिवीजन30 के रूप में डिवीजनल कमिश्नर के आधीन संगठित किया गया था। मेजर एफ० डब्लू० पिकने झाँसी डिवीजन के प्रथम कमिश्नर थे। झाँसी नगर अंग्रेजों के अधिपत्य में था परन्तु बेतवा एवं धसान नदियों के मध्य का भूभाग रानी लक्ष्मीबाई के सहयोगी क्रान्तिकारियों के अधिकार में अप्रेल 1858 ई० से अक्टूबर 1858 ई० तक बना रहा। झाँसी डिवीजन के कमिश्नर पिकने ने बरूआ-सागर एवं मऊरानीपुर में क्रान्तिकारियों की गतिविधियाँ रोकने हेतु अगस्त माह के द्वितीय सप्ताह में 750 सैनिकों को लेकर झाँसी से प्रस्थान किया था।

कमिश्नर पिकने का स्मृति स्मारक झाँसी में ही स्थित है यह ऊँची जगती पर स्थापित अष्टकोणीय पाषाण स्तम्भ है इसके प्रत्येक कोण पर योरोप की गोथिक स्थापत्य शैली की मेहराब मेहराब वाले द्वार की लघु अनुकृति है तत्पश्चात स्तम्भ ऊपर की ओर सकरा बनाकर अत में नुकीले सर्वोच्च भाग के रूप में निर्मित किया गया है। अंग्रेजों के कब्रिस्तान स्थित विशाल स्मृति स्तम्भ से यह लघु है परन्तु स्थापत्य शैली में पूर्णतः साम्यता रखता है। स्तम्भ पर कमिश्नर का नाम, पदनाम तथा मृत्यु तिथि 30 जुलाई 1862 अंकित है।

रिसाला कब्रिस्तान

झाँसी की सैनिक छावनी में स्थित रिसाला कब्रिस्तान सौ वर्ष से अधिक प्राचीन है। इसके प्रवेश वीथिका के दोनों पार्श्वों में एक-एक लघु कक्ष है, इनके द्वारों की मेहराबें योरोप के गोथिक स्थापत्य शैली की है। बांये कक्ष में उन यूरोपीयन्स तथा आँग्ल भारतीयों के नामों से अंकित अभिलेख रखे हैं जो 1857 तथा 58 ई० में स्वातंत्य युद्ध में झाँसी में मारे गये थे। इनमें कैप्टन एलैक्जेन्डर स्किने (झाँसी जालौन का सुपरिन्टेन्डेन्ट तथा 68 वीं बंगाल नेटिव इन्फेन्ट्री का कमाण्डर) कैप्टन एफ० डी० गॉर्डन (डिप्टीकमिश्नर झाँसी तथा झाँसी स्थित 10 वीं मद्रास इन्फेन्ट्री का कमांडर तथा कैप्टन

डनलप (झाँसी स्थित 12 वीं बंगाल नेटिव इन्फ़ेन्ट्री का कमान्डर) के नाम विशेषरूप से उल्लेखनीय हैं।

एक अभिलेख यहां एच० 86 रॉयल रेजीमेंट के उन सिपाहियों की स्मृति में भी लगा है जो 1 तथा 3 अप्रेल 1858 ई० के वेतवा युद्ध में मारे गये थे । ये अभिलेख मूल-रूप में यहाँ न थे। अपितु मेमोरियल सिमेट्री तथा अंग्रजों के कब्रिस्तान से लाकर यहां बाद में लगा दिये गये थे । इस कब्रिस्तान में अनेक योरोपियन अधिकारियों एवं उनके परिजनों की अभिलिखित कब्रे हैं, इन्हें अत्यन्त सुन्दर स्थापत्य से अलंकृत किया गया था इनमें से अनेक सौवर्ष से भी अधिक प्राचीन हैं। रिसाला कब्रिस्तान के समीप एक मार्ग अंग्रेज सेनापति सरह्यूरोज की स्मृति में ह्यूरोज रोड (पट्टा लगा है) कहलाता था।

संदर्भः —

1- बाजपेयी, कृष्णदत्त, अहिच्छत्रा फलक पाँच
2- पाण्डेय, रूद्र किशोर, कलिंजर की शैव प्रतिमाओं का एक ऐतिहासिक अध्ययन पृ० 135 चित्र० 46 (अप्रकाशि) शोध प्रबन्धत
3- राजकीय सग्रहालय झाँसी पार्वती मस्तक क० सं० 80.30
4- तिवारी, राकेश, सर्वेक्षण रिपोर्ट 1980-81, पर्वतीय पुरातत्व इकाई अलमोड़ा
5- राज्यसंग्रहालय लखनऊ क स० 58.47
6- तिवारी गोरेलाल, बुन्देलखण्ड का संक्षिप्त इतिहास पृ० 363
7- त्रिवेदी, एस० डी०, द जराय टेम्पिल एट बरूवासागर
8- 1979 ई० में लेखक को सर्वेक्षण मे प्राप्त हुआ था।
9- राजकीय संग्रहालय झाँसी क० सं० 80.67
10- वही क० सं० 80.68
11- वही क० स० 81.24
12- श्री अलोक त्रिपाठी तकनीकी सहायक भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण द्वारा प्राप्त सूचना
13- झाँसी डिवीजन प्रीम्यूटिनी रिकॉर्ड्स वॉ-84 डिस्पेच 19 फाइल न० 175-176 सन् 1856

14- माझा प्रवास (आँखो देखा गदर पृ० 79)

15- पारसनीस डी० बी०, महारानी लक्ष्मीबाई पृ० 164

16- मन्दिर के समीप स्थित कुआ सेंधिया (सिन्धिया) कहलाता है । ग्राम भागौर तहसील करैरा जनपद शिवपुरी मध्यप्रदेश स्थित कुछ कृषि भूमि जयेश्वर महादेव को समर्पित है । वर्तमान में संत श्री बाबा रामदास इस मन्दिर के महन्त हैं ।

17- यह ग्राम झाँसी ललितपुर मार्ग पर स्थित खैलार के समीप है, इसके ही नाम पर झाँसी नगर का एक द्वार सैय्यर दरवाजा कहलाता है ।

18- पद्मपुराण उ० खं० 236/72-73

19- श्री एरिक लाल डीन ऑफ चर्चेज ऑफ झाँसी से प्राप्त सूचना

20- वही

21- इस चर्च में शिलान्यास अभिलेख लगा हुआ है ।

22- यहाँ योरोपीय शैली का प्राचीन फर्नीचर एवं साजसज्जा है ।

23- तिवारी गोरे लाल, बुन्देलखण्ड का संक्षिप्त इतिहास पृ० 280

24- वही पृ० 282

25- झाँसी गजेटियर पृ० 48

26- महन्त श्री विजयराम भारती, खैरवास (पिछोर जनपद शिवपुरी मध्य प्रदेश) के पास दान की सनद सुरक्षित है, वह इस ग्रन्थ के परिशिष्ट में (चित्र क्रम 14) प्रकाशित किया गया है ।

27- द्विवेदी मदन मोहन मदनेश, लक्ष्मीबाई रासो सम्पादक भगवानदास माहौर

28- रतन जू दीक्षित के वंशज श्री हरिमोहन दीक्षित अधिवक्ता झाँसी से प्राप्त सूचना

29- फॉरेन डिपार्टमेंट पॉलिटिकल कन्सूलेशन 30 दिसम्बर 1855 सप्लीमेंट न० 280

30- झाँसी गजेटियर पृ० 70

कला

मूर्तिकला, चित्रांकन, अस्त्र-शस्त्र

मूर्तिकला

स्मारकों की भाँति झांसी में मूर्तियों का निर्माण भी बुन्देला शैली में हुआ था। बुन्देला मूर्तिकला की विशेषतायें—

1- बहुसंख्यक प्रतिमायें शिलाओं (पटियों) पर निर्मित हैं, चारो ओर से उत्कीर्ण कर बनाई गयी प्रतिमायें अत्यन्त अल्प हैं।

2- शरीर विन्यास सुन्दर है, नेत्र गोलकार तथा होंठ मोटे हैं।

3- मूर्तिनिर्माण में मध्यकालीन परम्पराओं का पालन किया गया है शेषशायी विष्णु तथा पार्वती (हाथों पर कमल, इन कमल पर गणेश कीर्तिकेय का अंकन) की प्रतिमायें इनके महत्वपूर्ण उदाहरण हैं।

4- प्राचीन परम्पराओं के अतिरिक्त मूर्ति निर्माण में नवीन तत्वों जैसे उपानहें विहीन सूर्य उनके सम्मुख सात पुरुषों के रूप में सप्त दिवस के अंकन का भी समावेश बुन्देला काल में हुआ था।

5- देवी देवताओं तथा उनके वाहनों के अतिरिक्त अन्य किसी भी विषय की मूर्तियों का पूर्णत: आभाव है जबकि समकालीन चित्रांकन में मानव जीवन के सभी पक्षों तथा पशुपक्षियों का चित्रण विशद् परिमाण में किया गया था।

झांसी की महत्वपूर्ण प्रतिमायें—

शिवोपासना यहाँ अत्याधिक लोकप्रिय रही है। काले पाषाण के भव्य शिवलिंग प्राय: गोसांइयों के सभी समाधिमंदिरों में प्रतिष्ठित है। वाणलिंग, पंचमुखी लिंग तथा पंचवृत्तलिंग भी यहाँ से प्राप्त हुये हैं। एक महत्वपूर्ण पंचमुखी लिंग (चित्र क्रम 8) गोसांईपुरा स्थित छोटा मठ के मंदिर में स्थापित है। दीक्षित बाग के प्राचीन मंदिर के

निकट सामान्य शिवलिंग के सर्वोच्च भाग पर पंचवृत्त (चित्रक्रम11) रूपायित है यह मर्ति शिल्प में महत्वपूर्ण प्रयोग था। शिवपुराण 1 में वर्णित भगवान शिव के सहस्त्र नामों के अनुरूप मूर्तिशिल्प में एक बड़े शिव-लिंग पर एक सहस्त्र लघुलिंग उत्कीर्ण करने की परम्परा इस क्षेत्र में प्राचीनकाल से ही विद्यमान थी पानी की धर्मशाला स्थित शिवालय दीक्षित बाग के मंदिर में तथा सुन्दरपुरी के उद्यान में सहस्त्रलिंग स्थापित हैं।

उमामहेश्वर मूर्ती वैद्यराज मोहल्ला स्थित रामजानकी मंदिर में प्रतिष्ठापित है। देव चतुर्भुजी हैं इनके दाहिने सामान्यहाथ में अक्षमाला तथा अतिरिक्त दाहिनेहाथ में त्रिशूल है। बांये सामान्य हाथ में डमरू तथा अतिरिक्त बांये हाथ में तलवार है। इसमें पार्वती देवी नमस्कार मुद्रा में हैं। संगमरमर की यह प्रतिमा अपने आप में महत्वपूर्ण है तात्कालीन परम्परा के अनुरूप पार्वती लँहगा ओढ़नी धारण किये हैं।

शेषशायी विष्णु, गणेश, कार्त्तिकेय, सूर्य, चन्द्र के अतिरिक्त, महिषासुर मर्दिनी एवं सरस्वती देवी की प्रतिमायें झांसी स्थित मंदिरों एवं गोसांइयों के समाधि मंदिरों में स्थापित हैं।

मराठों ने अपने लोकप्रिय देवता खण्डोवा की प्रतिष्ठा झांसी में करवायी थी। यह देव खाण्डेराव के नाम से भी प्रसिद्ध है। नगर के दक्षिण में खाण्डेराव का मन्दिर है देव अपने नाम के अनुरूप योद्धावेश में रूपायित हैं। वे अश्वारूढ़ हैं दांये (ऊपर) उठे हुये हाथ में खड्ग है, बांये हाथ से वे अपनी बांयी जांघ पर विराजमान देवी (महाड़सा) को साधे हुये हैं। देव के अश्व के पैरों के मध्य एक पुरूष पड़ा हुआ अंकित है। खाण्डोवा विजय का देवता है देवी इसकी शक्ति है तथा नीचे पड़ा हुआ पुरुष शत्रु का प्रतीक है। कहा जाता है कि झांसी के राजा विजय दशमी (दशहरे) को खाण्डोवा का पूजन करते थे।

चित्रांकन

मराठा कालीन झांसी नगर में कदचित ही कोई मंदिर, प्रासाद अथवा स्मारक था जो चित्रित न था। स्थापत्य तथा मूर्ति शिल्प के सदृश यहां का चित्रांकन भी बुन्देला शैली

का है इसके साथ ही साथ मुगल एवं मराठा प्रभाव भी चित्रों में देखने को मिलता है। झांसी की बुन्देला चित्रकला शैली की विशेषतायें—

1 मानव मुखमण्डल का अंकन एक-चश्म तथा पौने दो-चश्म चेहरा बनाकर किया गया था।

2 पुरुष जामा तथा कतैया (उर्ध्व वस्त्र) तथा अधोवस्त्र के रूप वें कटिवस्त्र गरगा तथा पाजामे धारण किये हैं। दतिया, ओरछा साही मुड़ासा, पगड़ी तथा बिजावरी सेला के अतिरिक्त झांसी में मराठा राजपुरुषों को पेशवाई तथा सिंदेशाही पगड़ियाँ बांधे चित्रित किया गया था इनको विभिन्न प्रकार के तुर्रे कलगियाँ लगाकर सुसज्जित किया गया था। पुरुष बड़ी बालियाँ मोतियों के कण्ठाभरण तथा चूड़ों से आभूषित हैं।

3 लहँगा, ओढ़नी तथा छोटी बाँहों की चोली स्त्रियों के परिधान थे इन्हें अत्यंत सुन्दरता से चित्रित किया गया था। मराठा प्रभाव के कारण कद्चित चित्रों में स्त्रियां महाराष्ट्रीय प्रकार से साड़ी पहिने दर्शायी गयी हैं। स्त्रियाँ दोलरी, तिलरी, चौलरी, दुदाना तथा तिदाना आदि आभूषण कण्ठ में धारण किये हैं कर्णफूल कान का तथा पुंगरिया नाक का आभूषण था। बाजूबन्द, कंकण, चूड़ा, विरमदी (हथफूल) से हाथ तथा पैजनों एवं पायलों से पैर सुशोभित हैं।

4 चित्रों में महत्वपूर्ण मुख्य वस्तु बड़े आकार में तथा अन्य चीजों को उससे दूर एवं लघु आकारमें चित्रित किया गया था। इस प्रकार के चित्रण को सांकेतिक शैली2 कहा गया है। बुन्देलखण्ड में प्रायः युद्ध होते रहते थे विषम परिस्थितियों के कारण चित्र भली भाँति पूर्ण नहीं हो पाते थे अतः साँकेतिक शैली का विकास स्वतः हो गया था।

5 भित्ति चित्रण के अतिरिक्त बसली पर तथा पाण्डुलिपियों पर लघु चित्रों के अंकन की परम्परा भी लोकप्रिय थी।

चित्रांकन तकनीक

चित्र संयोजन हेतु झाँसी में तीन प्रकार की तकनीक का आश्रय लिया जाता था

1 छिलाई

सतह पर रूजमिलाकर प्लास्टर करते थे, इसके ऊपर पुनः हिरमिजी मिला हुआ प्लास्टर किया जाता था ततपश्चात् आवश्यकतानुसार मनचाहे रंग को छीलकर उभारते तथा अन्य रंगों को दबा रहने देकर चित्र बनाये जाते थे। गोसांइयों की छतरियों में छज्जों के टूड़ों के मध्य इस तकनीक से चित्र बनाये गये थे।

2 उत्कीर्ण

सतह पर चूने के मोटे प्लास्टर को जमाकर उसको इच्छानुसार आलेखन काटकर चित्रण किया जाता था। रानीमहल मुरली मनोहर तथा गणेश मंदिर छतरी राजा गंगाधर राव तथा सुगंधपुरी के बगीचा स्थित्त समाधि मंदिर की बाह्य दीवार पर इस प्रकार का अलंकरण किया गया था।

3 लिखाई

चिकनी सतह पर तूलिका से चित्रांकन किया जाता था, इस प्रकार की तकनीक अत्यंत लोकप्रिय थी। झांसी के बहुसंख्यक स्मारकों में इसी विधि से चित्रांकन किया गया था।

चित्रांकन के विषय

धार्मिक चित्र

रामायण, कृष्णलीला तथा पौराणिक आख्यानों का चित्रण झांसी के कलाकारों का प्रिय विषय था। सोनेराव की बगिया स्थित मार्कण्डेय शिव मंदिर के गर्भगृह में कृष्ण लीला तथा पौराणिक आख्यानों के सुन्दर चित्र हैं। गौसांइयों के समाधि मंदिरों में बहुसंख्यक धार्मिक चित्र हैं। वसली पर भी अत्यंत सुन्दर धार्मिक चित्र बनाये गये थे झांसी के राजा रामचन्द्र राव की जन्म पत्री पर नवग्रहों[3] का चित्रण था।

व्यक्ति चित्र

झांसी में राजपुरूषों के व्यक्ति चित्र बनाने की परम्परा अत्यंत लोकप्रिय थी वसली के अतिरिक्त रघुनाथ जी के मंदिर तथा सोनेराव के मार्कडेय मंदिर में अनेक राजा महाराजाओं के भित्ति चित्र थे। रघुनाथ जी के मदिर में राजा गंगाधर राव तथा रानी लक्ष्मी बाई (चित्रक्रम 13) के भित्तिचित्र थे जो अब नष्ट हो गये हैं।

युद्ध एव शिकार

रानी लक्ष्मीवाई एवं अंग्रेजों के मध्य हुये युद्ध का चित्रण झांसी के कलाकारों ने बसली एवं मंदिरों की भित्तियों पर निपुणता पूर्वक किया था । बसली पर अश्वारुढ़[4] तथा अंग्रेजों से युद्ध करते हुये रानी के अनेक चित्र प्राप्त हुये हैं। शिकार दृश्य गोसांइयों के समाधि मन्दिरों में चित्रित हैं ।

जनजीवन

पिछोर ग्राम स्थित एककक्षीय गोसांई समाधि मंदिर पर चक्की चलाती स्त्री, रीछसहित मदारी तथा योद्धाओं के सुन्दर चित्र हैं ।

प्रकृति एवं पशुपक्षी

झाँसी के सभी स्मारकों में अत्यन्त सुन्दर बेलबूटों तथा फुलकारी का चित्रण है । सोने राव के मार्कण्डेय मंदिर में अंगूर की बेल चित्रों की किनारी के रूप में चित्रित की गयी है । पिछोर ग्राम के गोसांई समाधि मन्दिर पर ऊँट, गज तथा अश्व के सुन्दर रेखा चित्र हैं अन्य समाधि मन्दिरों में भी गज तथा अश्व आवश्यकतानुसार चित्रित हैं । मयूर, शुक, सारस, कपोत का चित्रण रानीमहल, दुर्ग की बारहदरी तथा सोनेराव के मार्कण्डेय मन्दिर में सुन्दरता से किया गया था ।

अस्त्र–शस्त्र

झांसी दुर्ग में रखी हुयी कड़क–बिजली एवं भवानी शंकर नामक विशाल तोप रानी लक्ष्मीबाई के शौर्य पूर्ण नेतृत्व तथा झांसी के निवासियों द्वारा स्वराज्य हेतु दिये गये बलिदानों की साक्षी हैं ।

कड़क बिजली

समर में इसके द्वारा छोड़े गये शक्तिशाली गोले कड़कती हुयी बिजली के सदृश होते थे अतः यह कड़क बिजली (चित्रक्रम4) कहलाती थी । इसका संचालन

कला

झांसी के सर्वश्रेष्ठ तोपची गुलाम गौस खॉ के द्वारा किया जाता था । गुलाम गौस खॉ की निपुणता तथा कार्य शैली से कड़क बिजली का आतंक दुश्मनों पर छाजाता था । यह तोप 5 मीटर 54 सेन्टीमीटर लम्बी है, इसकी गोलाई 1 मीटर 75 सेन्टी-मीटर है। तोप के मध्य भाग पर तीन पट्टियों में विभक्त फूल पत्तियों एवं रस्सी के नमूने का सुन्दर अलंकरण है। यह सिहमुख है। नेत्र एवं भ्रू कलात्मक ढंग से बनाये गये थे गये थे । यह तोप झांसी दुर्ग के पूर्वी मैदान में स्थापित है।

भवानी शंकर

महादेव प्रलय के देवता हैं भवानी उनकी शक्ति है इसी संदर्भ में दूसरी तोप का नाम भवानी-शंकर (चित्रक्रम5) है। यह दुर्ग स्थित गणेश मंदिर के पीछे बुर्ज पर रखी है। यह तोप स्वर्ण एवं रजत की पच्चीकारी से सुसज्जित थी इसका मुख सिहमुख के समान है । तोप पर बीचोबीच फूल पत्तियों के अलंकरण के मध्य चार पंक्तियों का लघु अभिलेख है। अभिलेख में तोप का नाम भवानी शंकर, राजा का नाम उदोत सिंह, उस्ताद का नाम जैराम तथा सम्वत् 1781 (1724 ई०) अंकित है। उदोत सिंह (1689 ई०-1736ई०) ओरछा के राजा तथा झांसी दुर्ग के निर्माता बीरसिंह जू देव के वंशज थे । इससे स्पष्ट होतां हैं कि यह तोप मूलतः ओरछा राज्य की थी एवं उदोत सिंह के पुत्र पृथ्वीसिंह के काल में 1742 ई० में झांसी दुर्ग के साथ ही मराठों को प्राप्त हुयी थी । भवानी शंकर तोप4 मीटर 97 सेन्टीमीटर लम्बी है इसकी इसकी गोलाई62 सेन्टीमीटर है ।

अंग्रेजों से युद्ध करने हेतु रानी लक्ष्मीबाई ने बहुत शक्तिशाली बारूद के गोले तय्यार करवाये थे, झांसी में निर्मित ये गोले अंग्रेजों के गोलों से युद्ध में अधिक श्रेष्ठ सिद्ध हुए थे । अनेक गोले डेढ़मन (चालीस किलोग्राम) तक के वजन5 के थे ।

संदर्भ :-

1- शिवपुराण-कोटिरुद्र संहिता
2- डॉ॰ जी॰ पी॰ शुभेश प्रवक्ता विपिन विहारी इन्टर कॉलेज झांसी ने सांकेतिक शैलीकी पहिचान की है।
3- शुभेश जी॰ पी॰, बुन्देलखण्ड की चित्र साधना पृ॰ 132 (अप्रकाशित शोध ग्रन्थ आगरा विश्व विद्यालय 1981)
4- अग्रवाल आर॰ ए॰, वॉल पेन्टिंग्स फ्रॉम सेन्ट्रल इण्डिया प्लेट 79 अंग्रेजों से युद्धरत रानी लक्ष्मीबाई के अनेक चित्र राजकीय संग्रहालय झांसी में संग्रहीत है।
5- तिवारी गोरेलाल, बुन्देलखण्ड का सक्षिप्त इतिहास पृ॰ 361

सांस्कृतिकी

झांसी राज्य॰ वाणिज्य व्यवसाय॰ मुद्रायें॰ साहित्य॰ लोकगीत॰

झांसी राज्य

बुन्देलखण्ड के इस मराठा राज्य में झांसी[1] करैरा[2] पिछोर[3] मऊरानीपुर[4] पण्डवाहा[5] विजयगढ़[6] परगने तथा कुल 696 ग्राम[7] थे। दुर्ग तथा नगर कोट से सुरक्षित राजधानी झांसी के अतिरिक्त सुदृढ़ प्रशासन एवं सुरक्षा हेतु प्रत्येक परगना मुख्यालय में तथा बरुआसागर एवं रानीपुर जैसे महत्वपूर्ण कस्बों में भी सुदृढ़ दुर्ग थे। राज्य के मुख्य व्यापारिक केन्द्र तथा परगना मुख्यालय मऊरानीपुर दुर्ग[8] के अतिरिक्त नगर प्राचीर से भी सुरक्षित था। राजधानी झांसी की सुरक्षा हेतु इसके इर्द गिर्द पाली, रक्सा, करारी दिगारा डिमरौनी तथा अम्बावाय में भी लघु दुर्ग (गढ़ी)[9] थे।

वाणिज्य व्यवसाय

झांसी राज्य की अर्थ व्यवस्था मुख्यतः कृषि पर आधारित थी जनसंख्या के एक बड़ भाग का मुख्य व्यवसाय कृषि कार्य था। अरजार, बरुआसागर, कचनेय, कोछाभावर, तथा बबीना स्थित झीलों एवं मगरवार बांध से सिंचाई हेतु पानी उपलब्धता होता था।

मऊरानीपुर इस मराठा राज्य का मुख्य व्यापारिक केन्द्र था छतरपुर राज्य के व्यापारियों का एक समूह वहाँ के राजा के दुर्व्यवहार से त्रस्त होकर मऊरानीपुर[10] आया झांसी के सूबेदार रघुनाथ राव द्वितीय ने अपने में राज्य स्वागत किया और सब प्रकार की सहायता का आश्वासन देकर उन्हें वहां बसा दिया। सम्भवतः इन व्यापारियों के वहां बस जाने के पश्चात् मऊरानीपुर प्रसिद्ध व्यापारिक केन्द्र बनगया। मऊरानीपुर में खरूआ वस्त्र उद्योग विकसित हुआ जो शीघ्र ही देश के विभिन्न क्षेत्रों में लोकप्रिय[11] हो गया। इन वस्त्रों को "अल" वनस्पति की जड़ों से निर्मित रंग (गहरालाला,

किरमिजी) में रंगा जाता था। अत्यधिक मांग के कारण अल वनस्पति की खेती "नगद फसल" बन गयी। मराठाकाल में मऊरानीपुर खरूआवस्त्रों के अतिरिक्त सभी प्रकार के खाद्यान्नों तथा घी की बहुत बड़ी मण्डी था। देश के अन्य व्यापारिक केन्द्रों छतरपुर, अमरावती, भोपाल, हाथरस, अलीगढ़, फतेहपुर, कानपुर तथा मिर्जापुर से झांसी राज्य की मऊरानीपुर मण्डी का व्यापार[12] होता था।

राजधानी झांसी में भी कालीन-गलीचे बनाने तथा धातु उद्योग का पर्याप्त विकास हुआ। बंगाल केलेवरी के कैप्टन जेम्स फ्रेंकलिन[13] ने 1825 ई॰ में उल्लेख किया था कि झांसी में विशिष्ट प्रकार के गलीचों का निर्माण होता है। रानी लक्ष्मीबाई के काल में लाला सूर्य गोपाल झांसी के प्रसिद्ध व्यापारी थे। बंजारे उन दिनों व्यापार के मुख्य संवा-हक थे वे माल एक मण्डी से दूसरी मण्डी ले जाने, लाने का कार्य करते थे। खाद्यान्न, खरूआवस्त्र तथा कालीन के व्यवसाय से राज्य को पर्याप्त राजस्व प्राप्त हो जाता था एवं जनसाधारण को जीवकोपार्जन का साधन उपलब्ध होता था। झांसी राज्य के कम्पनी साम्राज्य में विलय के पश्चात् उद्योग व्यवसाय समाप्त होने लगे क्योंकि अंग्रेज विदेशी वस्तुओं के प्रसार[14] को प्रोत्साहित करते थे।

मुद्रायें (सिक्के)

झांसी राज्य की टकसाल इसके प्राचीन नाम बलवन्त नगर के नाम से ही प्रसिद्ध थी। इस टकसाल से सम्राट शाह आलम द्वितीय[15] (1739 ई॰ से 1806 ई॰) के नाम से मुद्रायें जारी की गयी थी। प्रथम मराठा सूबेदार नारोशंकर के द्वितीय राजकाल 1761 ई॰ से बलवन्तनगर टकसाल से मुद्रायें जारी की जाने लगी थीं यहां की स्वर्ण मुद्रायें नारोशंकर साही[16] अथवा झांसी साही कहलाती थी। झांसी की रजत मुद्रायें नाना साही[17] तथा ताम्र मुद्रायें सूबेदार साही[18] के नाम से प्रसिद्ध थीं।

बुन्देलखण्ड में ईस्ट इण्डिया कम्पनी की प्रभु सत्ता स्थापित हो जाने के पश्चात् राजा रामचन्द्र राव के काल में 1826 ई॰ में बलवन्त नगर टकसाल बन्द[19] कर दी गयी थी। झांसी का टकसाल मोहल्ला बलवंतनगर टकसाल का प्रतीक है। बलवंत नगर टकसाल से जारी की गयी कुछ रजत एवं ताम्र मुद्रायें भारतीय संग्रहालय कलकत्ता[20] में संग्रहीत हैं।

साहित्य

बुन्देला गोसांई काल से ही झांसी में साहित्यिक गतिविधियों की गौरवशाली परम्परा प्रारम्भ हो चुकी थी। सम्वत् 1780 (1723 ई०) के झांसी निवासी मुस्लिम कवि रसरंग का उल्लेख मिलता है, रसरंग प्रसिद्ध साहित्यकार भगवान रसिक के शिष्य21 थे।

मराठाकाल में झांसी में साहित्यिक गतिविधियां अपने चर्मोत्कर्ष पर थी। सूबेदार शिवराव हरी के काल का प्रसिद्ध कवि प्रताप कायस्थ22 (सम्वत् 1865–1808 ई०) था। झांसी में ग्रन्थों की रचना के अतिरिक्त उनकी प्रतिलिपियां भी तैयार की जाती थीं। इस संदर्भ में राजकीय संग्रहालय झांसी में संग्रहीत दो ग्रन्थ उत्तम चरित तथा विनय पत्रिका विशेष रूप से उल्लेखनीय है। उत्तम चरित23 बुन्देला शैली के सुन्दर चित्रों से पूर्णत: सुसज्जित है इस सुन्दर ग्रन्थ की तिथि मिति क्वार सुदी 4 शनिवासरे सम्वत् 1845 (1788 ई०) है इसमें मुकाम श्री बलवंत नग्र लिखा है। बलवंत नगर झाँसी का पुराना नाम था। यह ग्रन्थ मराठा सूबेदार रघुनाथ राव द्वितीय के काल का है।

विनय पत्रिका24 की प्रतिलिपि राजा गंगाधर राव के काल की है इस पर कार्तिक वदी 13 सम्वत् 1905 (1848 ई०) तिथि तथा मुकाम झांसी अंकित है। हीरालाल व्यास हृदयेश राजा गंगाधर राव के दरबार के प्रसिद्ध कवि थे। हृदयेश जी की प्रसिद्ध साहित्यिक25 कृति "विस्वस करन" है। राजा गंगाधर राव की साहित्य संस्कृति में विशेष रूचि थी अपने पूर्वजों द्वारा संग्रहीत पाण्डुलिपियों के संग्रह में उन्होंने अत्यधिक वृद्धि की थी। प्रथम स्वातंत्र्य युद्ध (1857 ई०) के समय अंग्रेजों ने झाँसी के साहित्य के विशाल संग्रह को नष्टकर26 दिया था।

प्रथम स्वातंत्र्य युद्ध में रानी लक्ष्मीबाई ने वीरगति प्राप्त की अत: झाँसी और इसके आसपास के क्षेत्रों के साहित्यकार जो अब तक मुख्यत: धार्मिक तथा सौन्दर्य रस की रचनाये करते थे वे रानी के शौर्य स्वदेश प्रेम तथा वीरगति को अपनी रचनाओं का विषय बनाने हेतु प्रेरित हुये। इस संदर्भ में दतिया के कवि कल्याण सिंह कुड़रा27

विशेष रूप से उल्लेखनीय है। इस स्वदेश प्रेमी कवि ने स्वातंत्र्य युद्ध के मात्र 12 वर्ष पश्चात् (सम्वत् 1926–1869 ई०) ब्रिटिश शासन के प्रचण्ड प्रवाह के मध्य "झाँसी को रायसो" लिखकर वीरांगना रानी को अपने श्रद्धा सुमन अर्पित किये। इसी श्रृंखला में झांसी के भग्गी दाऊ जू श्याम[28] ने रानी लक्ष्मीबाई और नत्थे खाँ के मध्य हुये संग्राम का वर्णन किया था। झांसी निवासी पण्डित मदन मोहन द्विवेदी[29] की प्रसिद्ध कृति "लक्ष्मीबाई रासो" वीरांगना की शौर्य वन्दना है। द्विवेदी जी का उप नाम मदनेश था। गंगाप्रसाद सुनार, लघुदास, चतुरेश तथा पूरनमल झांसी के प्रसिद्ध साहित्यकार थे जिनकी अनेक रचनायें वीरांगना रानी लक्ष्मीबाई को समर्पित हैं।

लोकगीत

रानी के शौर्यपूर्ण बलिदान का प्रभाव जन जन पर हुआ, जनसाधारण की श्रद्धा लोकगीतों में मुखरित होकर चहुंदिश प्रवाहित होने लगी थी। झांसी के निवासी उन्हें आदर एवं श्रद्धा से "बाई साहब" सम्बोधित करते थे। बाई साहब का अपने सैनिकों के प्रति जो स्नेह था उसका, उनके दृढ़संकल्प शौर्यपूर्ण संघर्ष तथा भीषण युद्ध करते हुये वीरगति को प्राप्त करना इन लोकगीतों[30] में अभिव्यक्त हुआ है।

खूब लड़ी मरदानी, अरे झाँसी वारी रानी
बुरजन बुरजन तोपें लगा दईं गोला चलाए आसमानी
अरे झाँसी वारी रानी, खूब लड़ी मरदानी
सबरे सिपाइन को पेरा जलेबीं, अपन चबाई गुरधानी ।। अरे झाँसी०

अपनो नाँव कमा गई जग में कर गई सोर बिकट भारी
बाईसाब झाँसी वारी
भीतर ब्राजी आदि भवानी, मूरत शिवशंकर की जानी
गौरा के पुत्र गणेश बिराजे भैरों की मड़िया न्यारी
बाई साब झाँसी वारी
धर के रूप चली मरदानी, अंगरेजन से लरी दिमानी संका काऊ की नईं मानी

लै तलवार कटा कर डारे, मन में रोस बड़ो भारी बाई साब झाँसी वारी
गोलंदाज करी बेइमानी रीतीं तोपें चलत दिखानीं मन में बाई साब न घबरानी ।।

बारी बैस रानी घुड़ला, पै निकरी हाथ नागिन तलवार
छोटी सी पलटन प्यारी रे रनियाँ पैदर और सवार ।। बारी०
खाई खन्दका वन के जिनावर काँटन की भरमार ।। बारी०
कट कट सोस गिरे धरती पै, लोऊ की वै गई धार ।। बारी०
रातौ दिना जुद्ध भऔ भारी, रानी गई सुरग सिधार । बारी०

दोहा— चिनगारी जब गदर की फैली चहुंदिस धाय
लूटपाट होवन लगी जो जी खों जहाँ पाय

सैर— कीन्हीं लड़ाई बाईसाब झाँसी की रानी
समसेर जंग हाथ लई बनीं मरदानीं

संदर्भ

1- झाँसी जनपद की झाँसी तहसील
2- शिवपुरी जनपद की करैरा तहसील
3- शिवपुरी जनपद की पिछोर तहसील
4- झाँसी जनपद की मऊरानीपुर तहसील
5- पण्डवाहा झाँसी जनपद की मऊरानीपुर तहसील में स्थित है ।
6- विजयगढ़ भी तहसील मऊरानीपुर जनपद झाँसी में हैं ।
7- एटकिन्सन इ० टी० स्टैस्टिकल डिसक्रिप्शन एण्ड हिस्टोरीकल एकाउन्ट ऑफ नॉर्थ वेस्टर्न इण्डिया वॉ० 1 पृ० 237
8- झाँसी गजेटियर पृ० 355
9- पाली एवं रक्सा की गढ़ियाँ नष्ट हो चुकी हैं। करारी तथा अम्बावाय में गढ़ी के कुछ भाग विद्यमान हैं । डिमरौनी तथा दिगारा के आसपास चार लघु गढ़ियाँ हैं ।

(10) झांसी गजेटियर पृ. 35।

(11) एटकिन्सन इ. टी. स्टैटिस्टिकल डिसक्रिप्शन एण्ड हिस्टोरीकल एकाउण्ट ऑफ नार्थ वेस्टर्न इण्डिया वॉ I पृ. 253

(12) वही, पृ. 544

(13) फ्रैंकलिन जे मेम्वायर्स ऑन बुन्देलखण्ड मेश सन् 1825 पृ. 277

(14) झांसी गजेटियर पृ. 161

(15) द स्टैण्डर्ड गाइड टु साउथ एशियन क्वॉइन्स एण्ड पेपर मनी सिन्स 1556 ए. डी. क्राउज पब्लीकेशन्स विसकोन्सीन पृ: 19

(16) दीवान प्रतिपालसिंह, बुन्देल खण्ड का इतिहास प्रथम भाग पृ. 111

(17) वही पृ. 114

(18) वही. पृ. 119

(19) एलन जे. कैटलॉग ऑफ द क्वाइन्स इन द इण्डियन म्यूजियम कैलकटा वॉ iv पृ. 348

(20) वही पृ. 346-348

(21) दीवान प्रतिपालसिंह, बुन्देलखण्ड का इतिहास प्रथम भाग पृ. 293

(22) वही पृ. 292

(23) राजकीय संग्रहालय झांसी क्र. सं. 78.3

(24) वही क्र. स 78.20

(25) इसका प्रकाशन बुन्देलखण्ड शोध संस्थान झांसी द्वारा किया गया हैं।

(26) पारसनीस डी. बी, महारानी लक्ष्मीबाई पृ. 164

(27) इस ग्रन्थ को दतिया के श्री हरिमोहनलाल श्रीवास्तव ने "वीरांगना लक्ष्मीबाई रासो और कहानी" नाम से प्रकाशित करवाया है।

(28) द्विवेदी मदनमोहन मदनेश, लक्ष्मीबाई रासो, सम्पादक भगवानदास माहौर भूमिका प्रष्ठ 16

(29) डा. भगवानदास माहौर द्वारा सम्पादित तथा श्रीमती यमुना माहौर द्वारा प्राशित ग्रन्थ

(30) माहौर भगवानदास, 1857 के स्वाधीनता संग्राम का हिन्दी साहित्य पर प्रभाव पृष्ठ 423 तथा 428

श्री
गणेश प्र
रा.दि न शंकरस्तं
नीय स्पव नारायण
शमंण प्राप्त स्वस्ति
राजते

तपोनिय श्री गुसाई पीतामर भरथीती ऐते राज

श्री पंडित नारोशंकर जी के नमोनाराइन वांचने

आपर तुमकौ

वाग करास्ते जिमि श्री वलिवंतनगर मैं दई है देऊ

वगसीरया वारी जिमी

वीघा ६, नौ सु अपनो वा [रि]....र ज्मासोवा गुलगाई

जो मरंमति की जो तु

म्हारे वाग सौं कोऊ वावत सो मुजाहिम न हू है

चैत्र सुदि ६ ता.८ आषर सम्वत १८०५

परिशिष्ट १

बलवंत नगर झांसी के प्रथम मराठा सूबेदार नारोशंकर द्वारा गोसांई पीताम्बर भारती को दियेगये भूमिदान की उपरोक्त सनद महंत श्री विजयराम भारती खैरवास (शिवपुरी म० प्र०) के पास सुरक्षित है।

परिशिष्ट २

झांसी के नेवालकर राजवंश का वंशवृत्त

रघुनाथराव (गोत्र गौतम)

कामदेव

रामचन्द्र

अनंतराम

रीभाऊ

ाशीनाथ
ाज्य के विलय
के समय झांसी
का तहसीलदार
था रानी के
क्रांतिकारी सह
योगियों में भी
प्रथम स्थान
रखता था।

सखाराम

वासुदेव

आनंदराव
राजा गंगाधरराव ने
इसे दत्तक लिया
था जो रानी के
दामोदर राव के
नाम से प्रसिद्ध
हुआ।

दामोदर

हरीपंत

रघुनाथराव द्वितीय
(1769 से 96 ई)
सूबेदार

शिवरावहरी
(सूबेदार 1796-1814)

कृष्णराव–रखबूबाई

रामचंद्रराव
सूबेदार/राजा
1814-35 ई॰
1832 में राजा
की उपाधि प्राप्त
हुई।

कृष्णराव द्वितीय
(दत्तक पुत्र)
सागर के सूबेदार विनायक राव चंदोरकर का पौत्र
तथा झांसी के राजा रामचंद्र राव की बहिन का
पुत्र था।

रघुनाथराव ततीय–जानकीबाई
(राजा 1835-38 ई॰)

अलीबहादुर
नसरतजंग
(गजरा से उत्पन्न अवैधपुत्र)

गंगाधरराव–रमाबाई
(राजा 1838-53 ई॰)

लक्ष्मीबाई
जून 1857 से अप्रेल
1858 ई॰ तक झांसी
की शासिका रहीं

दामोदर राव
(दत्तक पुत्र)

लक्ष्मणराव

सदाशिव राव
त्र्यम्बक राव

नारायण राव

सदाशिव नारायन

परिशिष्ट ३

वीरांगना रानी लक्ष्मीबाई जू देवी

बनारस की मणिकर्णिका (मनु) बिठूर की छबीली तथा सम्पूर्ण विश्व में महारानी लक्ष्मीबाई नाम से प्रसिद्ध वीरांगना झांसी की 'बाई साहब' थीं। ग्वालियर में रानी ने वीरगति प्राप्त की, वहां भी वे झांसी वाली बाई के नाम से प्रसिद्ध हुयीं। बाई और बाई साहब का सम्बोधन उन्हें उनके उच्च मानवीय गुणों, शौर्य तथा द्रढ़ संकल्प शक्ति से प्रभावित होकर जनसामान्य ने दिया था।

पति की मृत्योपरान्त झांसी के कम्पनी राज्य में विलय किये जाने पर वे इस अन्याय से क्रोधित हो उठी और उनके उद्‌गार अमर हो गये "अपनी झांसी दूंगी नहीं" समय आने पर उन्होंने अपने इन मनोभावों को कार्य रूप में परणित किया। साम्राज्यवादी अंग्रेजों ने अपने स्वार्थो के अनुरूप 1857 ई. के स्वातन्त्र समर को गदर एवं विद्रोह की संज्ञा दी और कुछ असत्य गवाहों के आधार पर यह सिद्ध करने का प्रयास किया कि रानी युद्ध नहीं चाहती थी, उनका शौर्य विवशता की उपज था। परन्तु वस्तुस्थिति यह थी कि 1857 ई. के स्वातंत्र्य युद्ध की तैयारी में उनका पूर्ण सहयोग नाना साहब तात्या टोपे तथा बानपुर के राजा मर्दनसिंह बुन्देला से था एवं उनसे उनके निकट सम्पर्क थे। ग्यारह जून अट्ठारहसौ सत्तावन को शासनसूत्र ग्रहण करते ही रानी ने सागर के कमिश्नर डब्लू. इ. इरस्किन को जो पत्र प्रेषित किया वह रानी की दूरदर्शिता एवं कूटनीति थी, यह पत्र लिखकर रानी ने ईस्ट इंडिण्या कम्पनी का अल्पकालीन सहयोग प्राप्त कर लिया था।

ग्यारह जून अट्ठारह सौ सत्तावन से चार अप्रैल अट्ठारह सौ अट्ठावन तक झांसी पर रानी का राज्य रहा इस दस माह से भी कम शासनकाल में उन्हें तीन शत्रुओं का सामना करना पड़ा। सर्वप्रथम रानी ने करैरा में सदाशिव राव के विद्रोह का दमन किया तत्पश्चात ओरछा राज्य की सेना से रानी का युद्ध हुआ। ओरछा की सेनाओं ने दीवान नत्थे खां के नेतृत्व में झांसी राज्य को रोंदते हुए राजधानी का घेरा डाल दिया। यह संघर्ष दो माह तक जारी रहा। रानी ने अपने साहस और शौर्य का परिचय देते हुए नत्थे खां को मार भगाया।

अपने पूर्व के अनुभव के आधार पर रानी का अंग्रेजों पर बिश्वास करने का तो प्रश्न ही नहीं था अतः झांसी में तीसरा युद्ध रानी ने अंग्रेजी सेना के प्रसिद्ध सेनापति सर ह्यूरोज के साथ लड़ा। तत्कालीन विश्व की आधुनिकतम सैन्यसज्जा से सुसज्जित सेना का सामना रानी लक्ष्मीबाई ने अपनी छोटी-सी सेना को लेकर किया था। इर्दगिर्द के सभी छोटे बड़े राजे रजवाड़े अंग्रेजो की सेवा में उपस्थित थे और उनकी हर प्रकार से सहायता कर रहे थे। बानपुर के राजा मर्दनसिंह जूदेव एकमात्र बुन्देला राजा थे जो रानी को सहयोग दे रहे थे उन्होंमें नत्थे खाँ से युद्ध करते समय भी रानी की सहायता की थी।

रानी को अपनी सम्पूर्ण प्रजा का सहयोग प्राप्त था। झांसी राज्य के निवासियों का विश्वास था कि समृद्धि एव धन की देवी लक्ष्मी स्वयं रानी के रूप में उन पर शासन करने और भारत को अंग्रेजों से बचाने आई है। रानी लक्ष्मीबाई में शौर्य के साथ ही साथ नेतृत्व एवं संगठन की अदभुत क्षमता थी। समाज के सभी वर्गों को उन्होंने देशहित में संगठित किया। उनके राज्य में किसी भी प्रकार का भेदभाव नहीं था। बुन्देलों परमारों मराठों के अतिरिक्त पठान उनकी सेना की शक्ति थे। झांसी में पठान विलायतियों के नाम से विख्यात

थे। रानी ने अट्ठारह सौ सत्तावन के स्वातंत्र्य युद्ध में जनसंगठन किया था पुरुष ही नहीं अपितु उन्होंने स्त्रियों को भी संगठित कर सुरक्षा व्यवस्था में लगाया। मोतीबाई सुन्दर, मुन्दर, जूही, दुर्गा तथा काशीबाई ने युद्धकाल में शौर्य का प्रदर्शन किया। रानी लक्ष्मीबाई ने सेना और जनता का संगठन ही नहीं किया अपितु नेतृत्व के साथ ही साथ स्वयम् भी रणक्षेत्र में अपने शौर्य का कीर्तिमान स्थापित किया था, झांसी नगर में शत्रु के प्रवेश का समाचार प्राप्त होते ही, स्वयम् मोर्चे पर पहुंचकर उन्होंने युद्ध किया तथा भीषण मारकाट कर बढ़ते हुए शत्रु को रोक दिया। आधे नगर पर अंग्रेजों का अधिकार होने के पश्चात् रानी को झांसी छोड़नी पड़ी। यह वीरांगना का ही साहस था कि चारों ओर से अंग्रेजी सेना से घिरे हुए नगर से वे सुरक्षित प्रस्थान कर गयीं। पीछा करते हुए आये अंग्रेज सेनानायक वॉकर को भाण्डेर में उन्होंने जख्मी कर दिया।

रानी लक्ष्मीबाई क्रांतिकारियों के लिए प्रेरणा स्रोत थी कोंच तथा कालपी के युद्धों के पश्चात उनके परामर्श से ही क्रांतिकारी सेना एवं नेता ग्वालियर पहुंचे थे। ग्वालियर के रणक्षेत्र में दुश्मनों को मारते हुए रानी ने वीरगति प्राप्त की। उनकी मृत्यु पर ह्यूरोज ने कहा था– "झांसी की रानी विद्रोहियों में सबसे वीर और कुशल नेता थी।

इससे बढ़कर एक वीरांगना के लिए सच्ची श्रद्धांजलि क्या हो सकती है कि उसके शत्रु ने भी उसकी कुशलता और वीरता की प्रशंसा की थी। रानी को झाँसी में अंग्रेजों से ही नहीं अपितु अनेक विश्वासघातियों दूल्हाजू, पीरअली, तथा लालता के कुचक्रों, षड़यन्त्रों का भी सामना करना पड़ा था परंतु वीरांगना एक क्षण के लिए भी विचलित न हुयी और अपना सर्वस्व अर्पण कर गई। वीरांगना लक्ष्मीबाई अपने देश के लिए जी और मरी। उनके बलिदान से भारत के स्वराज्य पथ का तिमिर छट गया और दिव्य प्रकाश फैला जो स्वतंत्रता व्यसनी भारतीयों का सतत मार्गदर्शन करता रहा और पंद्रह अगस्त उन्नीस सौ सैंतालीस की अर्द्धरात्रि की वेला में एक बृहत्तर आलोक-पुंज में परिवर्तित हो गया।

संदर्भ ग्रंथ सूची

मूल स्रोत – महाभारत (प्रथमखण्ड) — गीता प्रेस
शिवपुराण — गोरखपुर
पदमपुराण — से प्रकाशित
फारेन पालिटिकल प्रोसीडिंग्स — राष्ट्रीय
फारेन पालिटिकल कांसुलेशन — अभिलेखागार
फारेन सीक्रेट कान्सुलेशन — नई दिल्ली
झांसी डिवीजन प्री म्यूटिनी रिकार्डस — क्षेत्रीय अभिलेखागार इलाहवाद
ईस्ट इण्डिया एनेक्सेशन आँफ झांसी 1855 (पार्लियामेंट्री पेपर्स)
म्यूटिनी पेपर बन्डल नं, दा — आफिस आँफ द रजिस्ट्रारहिस्टोरिकल रिकार्ड ग्वालियर म० प्र०

ए कलेक्शन आँफ ट्रीटीज एगेग मेन्ट्स एण्ड सनदस रिलेटिंग टु इण्डिया एण्ड नेवरिंग कन्ट्रीज वाँ, थर्ड कम्पाइल्ड बाई- सी. डब्लू एचीसन

नरेटिव आँफ इवन्टस अटेन्डिग व आउट वेक आंफ डिस्टर्बेन्सेस एण्ड द रेस्टोरेशन आँफ अथोर्टी इन द डिवीजन आफ झांसी इन 1857—58 बाई एफ. डब्लू पिंकने

सिलेक्शन फ्रोम द लेटर्स डिस्पैचेस एण्ड अदर स्टेट पेपर्स पेपर्स प्रिजर्वड इन द मिलट्री डिपार्टमेंट गवर्नमेंट आंफ इण्डिया वाँ फोर्थ एडीटेड बाई जी. एम. फारेस्ट

स्टैस्टिकल डिस्क्रिप्टिव एण्ड हिस्टोरीकल एकाउन्ट आँफ द नार्थवेस्टर्न प्राँविन्सेस आँफ इन्डिया वाँ. वन इ. टी एट किंसन

फ्रीडम स्ट्रगल इज उत्तर प्रदेश वाँ वन (1957) वाँ (1959) एडीटेड बाई एस. ए. एम. रिजवी एण्ड एम. एल. भार्गव

कार्पस इन्स्क्रिप्शन इण्डिकेरम वाँ थर्ड एपिग्राफिका इण्डिया बा वन वाँ नाइन्थ आक्योंलाँजिकल सर्वे आँफ इण्डिया एनुअल रिपोर्टस वाँ टेन्थ वाँ. ट्वन्टीवन

अन्य स्त्रोत—
अर्नाल्डइ — द मरविवेंश आँफ डलहोजीज एडमिनिस्ट्रेशन आँफ ब्रिटिश इण्डिया वाँ टू लंडन 1865
अग्रवालआर. ए.— वाँल पेन्टिंग्स आफ सेन्ट्रल इण्डिया
अलनजे.— कैटलाग आँफ क्वाइन्स इन द इण्डियन म्यूजियम, कैलकट वाँ. फोर्थ, न्यूदेहली 1976
केय जे डब्लू:- ए हिस्ट्री आफ सिपायी वार इन इण्डिया वाँ थर्ड लंदन 1876
केय जे डब्लू एण्ड माँलसन जी. बी. :—हिस्ट्री आँफ इण्डियन म्यूटिनी 1857-58 वां फिफ्थ, 1897

गोडसेवी— माझा प्रवास (हिंदी अनुवाद श्री अमृतलाल नागर आंखों देखा गदर)
निवारी गोरेलाल:- बुंदेलखण्ड का संक्षिप्त इतिहास
सम्वत् 1990 प्रयाग
तिवारी राकेश:- सर्वेक्षण रिपोर्ट 1980-81 पर्वतीय पुरातत्व इकाई अल्मोड़ा, लखनऊ
तहमनकर डी०इ०:- द रानी ऑफ झांसी
जेको पब्लिशिंग हाउस
द्विवेदी मदनमोहन मदनेश :- लक्ष्मीबाई रासो
(श्री भगवान दास माहोर द्वारा सम्पादित) झांसी 1969
द हिस्ट्री एण्ड कल्चर ऑफ इण्डियन पीपुल
वॉ. टू द ऐज ऑफ इम्पीरियल यूनिटी
द स्टेण्डर्ड गाइड टू साउथ इण्डियन क्वाईस एण्ड पेपर मनी
पाण्डेय राजबलि:- अशोक के अभिलेख
पारसनीस डी० बी०:— झांसी की रानी लक्ष्मीबाई, इलाहाबाद 1964
पॉग्सन:— ए हिस्ट्री ऑफ बुन्देलाज, 1828
रि प्रिंटेड बाई बी०आर० पब्लिशिंग कार्पोरेशन, देहली 1974
पाठक विशुद्धानंद— उत्तर भारत का राजनीतिक इतिहास, लखनऊ
पंत पी० सी०— द हिस्टोरिक उत्तरप्रदेश, दिल्ली 1982
फ्रेंकलिन जे०— सेमायर्स आन 31
बोस एस० एन०— हिस्ट्री आफ चंदेलाज आफ जैजाक भुक्ति, कलकत्ता 1956
भण्डारकर डी० आर०— कारमाइकल लेक्चर्स वॉ० वन, कलकत्ता 1961
मजूमदार आर. सी — सिपाही म्यूटिनी एण्ड रिवोल्ट इन 1857
मिश्रा ए.एम — नाना साहेब एण्ड द फाइट फार फ्रीडम, लखनऊ 1962
माहोर भगवानदास— 1857 के स्वाधीनता संग्राम का हिन्दी साहित्य पर प्रभाव, अजमेर 1976
वाट्स टी युवान— युवांनच्वांग ट्रेवल इन इण्डिया वा. टू (प्रथम भारती संस्करण, दिल्ली १९६१
वर्मा वृन्दवनलाल— झांसी की रानी लक्ष्मीबाई, झांसी 1963
बाजपेयी के. डी. — अहिच्छत्रा लखनऊ
सरकार डी. सी.— सिलैक्ट इंस्क्रप्शन्स, कलकत्ता 1942
सरदेसाई जी. एस.— न्यू हिस्ट्री ऑफ मराठाज वॉ टू, बम्बई 1948
सिन्हा एस. एन.— रानी लक्ष्मीबाई ऑफ झांसी
सुन्दरलाल— भारत में अंग्रेजी राज वॉ टू लखनऊ 1960
शेजवलकर टी. सी.— इण्डियन हिस्टोरीकल रिकार्ड कमीशन प्रासीडिंग्स वॉ ट्वन्टी सेविन पार्ट टू नागपुर 1950
त्रिवेदी एस. डी.— स्कल्प्चर इन द झांसी म्यूजियम झांसी

श्रीवास्तव ए॰ एल॰ — बुन्देलखण्ड का पुरातत्व, झाँसी
जराय टेम्पिल एट बरुवासागर झांसी
शुजाउद्दौला, बाँवन आगरा 1961

अप्रकाशित शोधग्रन्थ

पाण्डेय रुद्रकिशोर :— कालिंजर शैव प्रतिमाओं का एक ऐतिहासिक अध्ययन (मेरठ विश्व विद्यालय 1986
शुभेश जी. पी. :— बुन्देलखण्ड की चित्र साधना (आगरा विश्व विद्यालय आगरा 1981

गजेटियर:—
ओरछा स्टेट :— (कैप्टन) सी. ई. लुअर्ड द्वारा सम्पादित लखनऊ 1907)
झाँसी डिस्ट्रिक :— (श्रीमती ईसा वासंती जोशी द्वारा सम्पादित लखनऊ 1965)
ग्वालियर डिस्ट्रिक:— (श्रीबी एस: कृष्णन द्वारा सम्पादित भोपाल 1968

चित्रमाला

चित्र परिचय

चित्रक्रम विवरण

1- महारानी लक्ष्मीबाई (विक्टोरिया अल्बर्ट संग्रहालय लंदन में सुरक्षित चित्र)

2- झांसी दुर्ग

3- रानीमहल

4- तोप, कड़क बिजली (झांसी दुर्ग)

5- तोप भवानी शंकर (झांसी दुर्ग)

6- शिव मंदिर (सिद्ध का मंदिर लक्ष्मीताल)

7- समाधि मंदिर (गोसाइयों का समाधि मंदिर कानपुर मार्ग झांसी)

8- पंचानन लिंग (छोटा मठ गोसाईपुरा)

9- गणपति (झांसी दुर्ग)

10- नन्दी (राजकीय संग्रहालय झांसी)

11- पंचवृत्त लिंग (दीक्षित बाग)

12- शेषशायी विष्णु (पानी की धर्मशाला स्थित शिवालय का भित्ति चित्र)

13- महाराजा गंगाधर राव महारानी लक्ष्मीबाई (रघुनाथजी के मंदिर का यह भित्ति चित्र नष्ट हो गया है)

14- सूबेदार नारोशंकर का दान पत्र (इसमें झांसी के प्राचीन नाम बलवंत नगर का उल्लेख है, परिशिष्ट—1)

15- महारानी लक्ष्मीबाई की मोहर

महारानी लक्ष्मीबाई

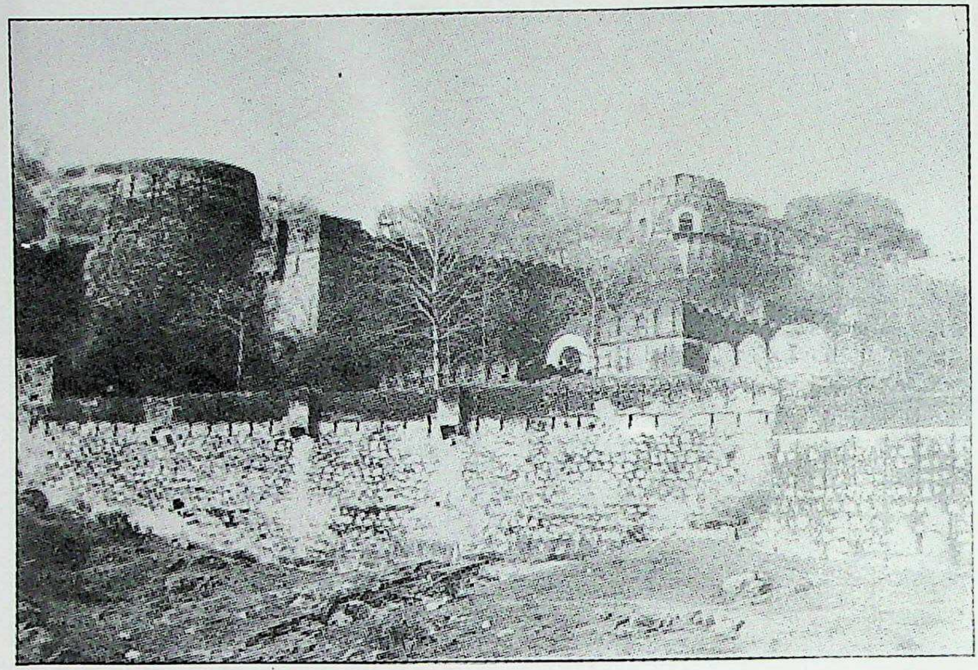

झांसी दुर्ग

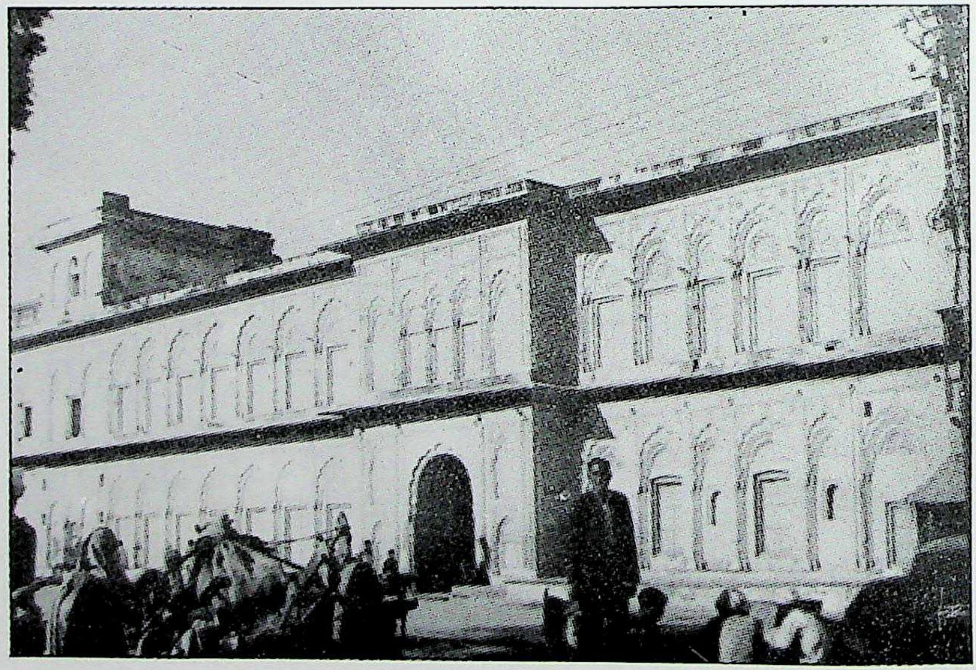

रानीमहल

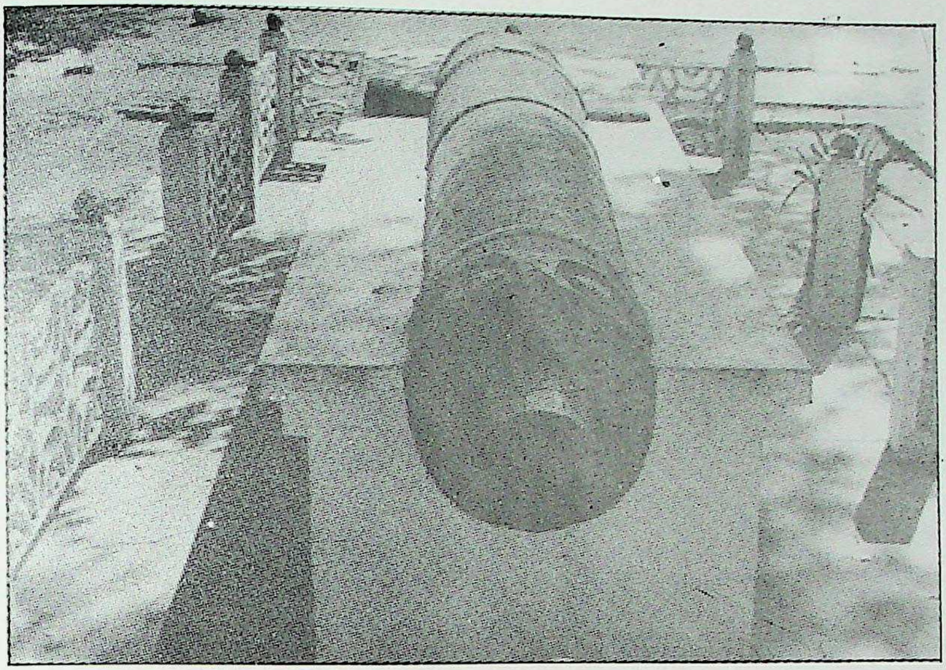

कड़क बिजली

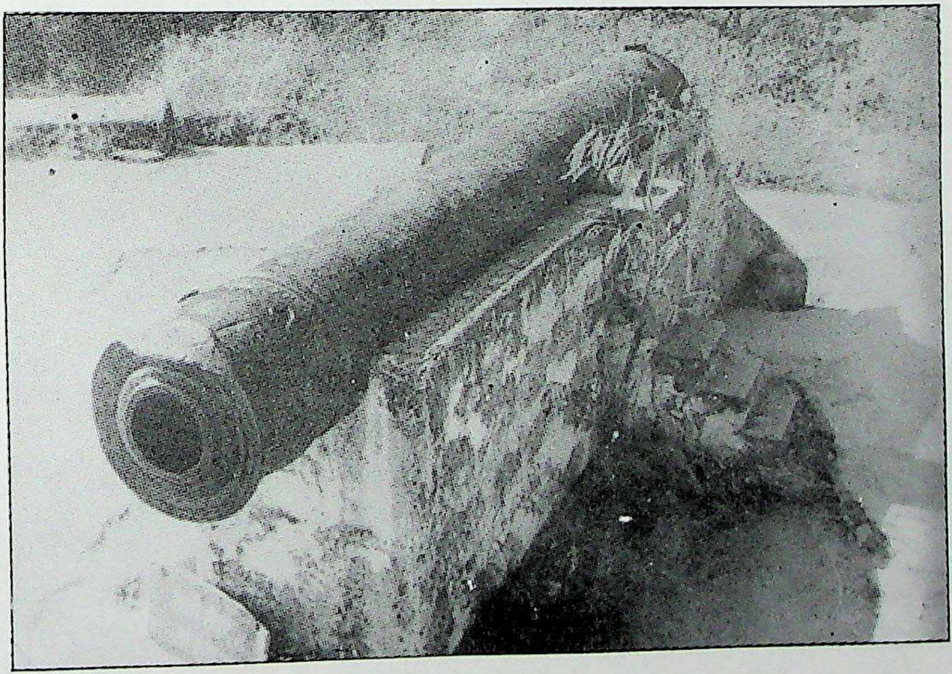

भवानी शंकर

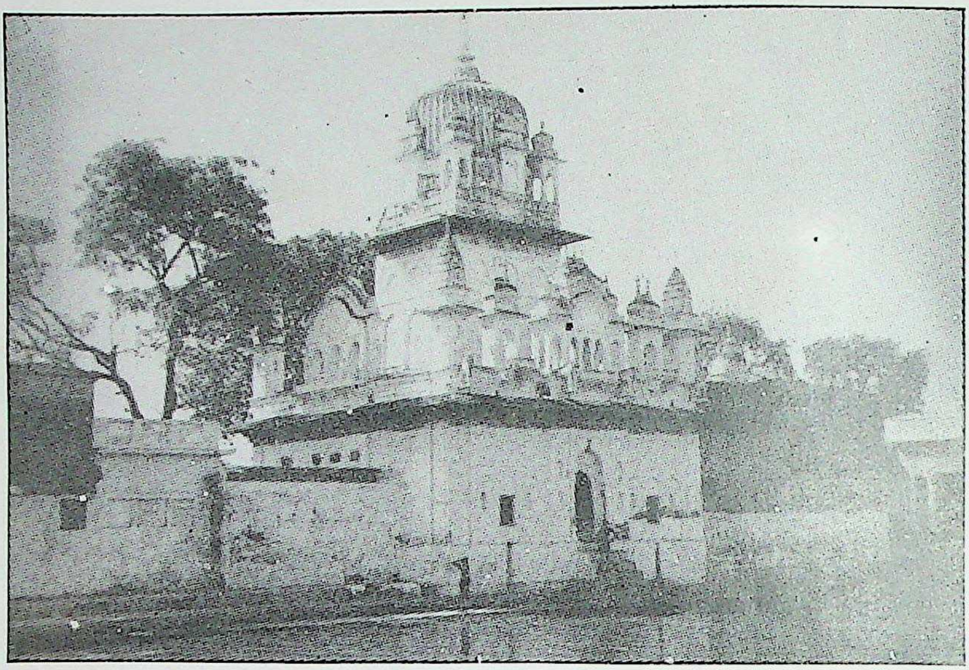

शिव मंदिर

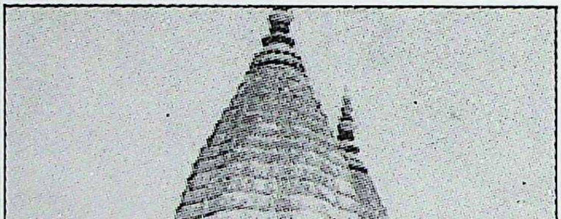

समाधि मंदिर

पंचानन लिंग

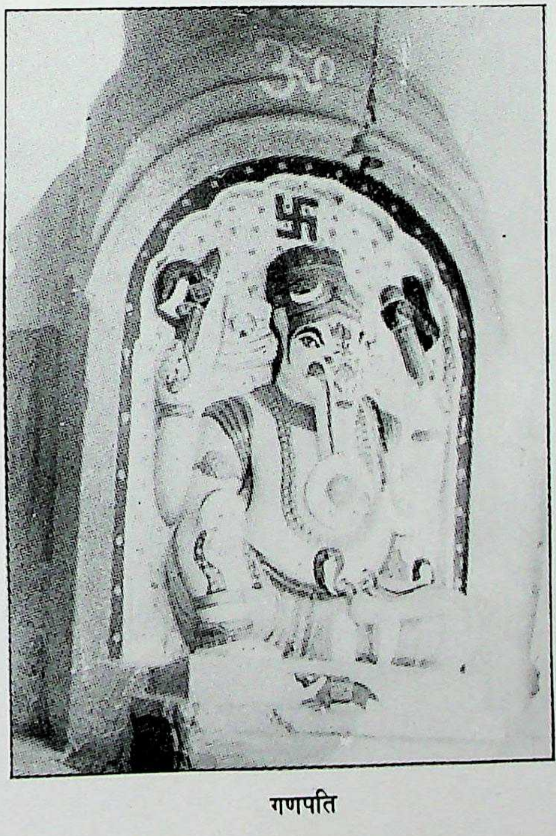

गणपति

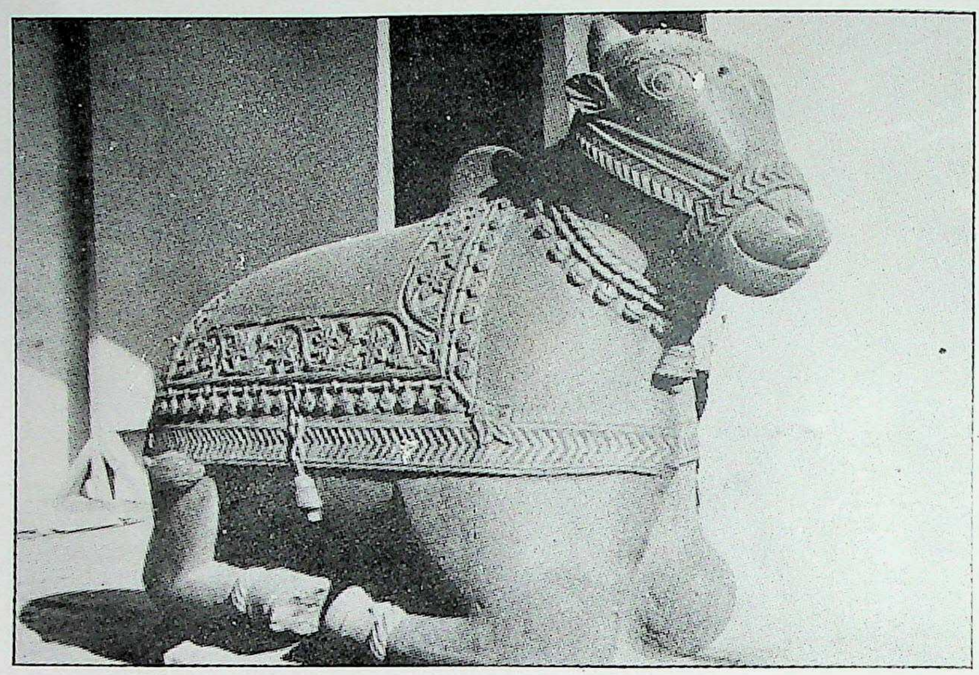

नन्दी

पंचवृत्त लिंग

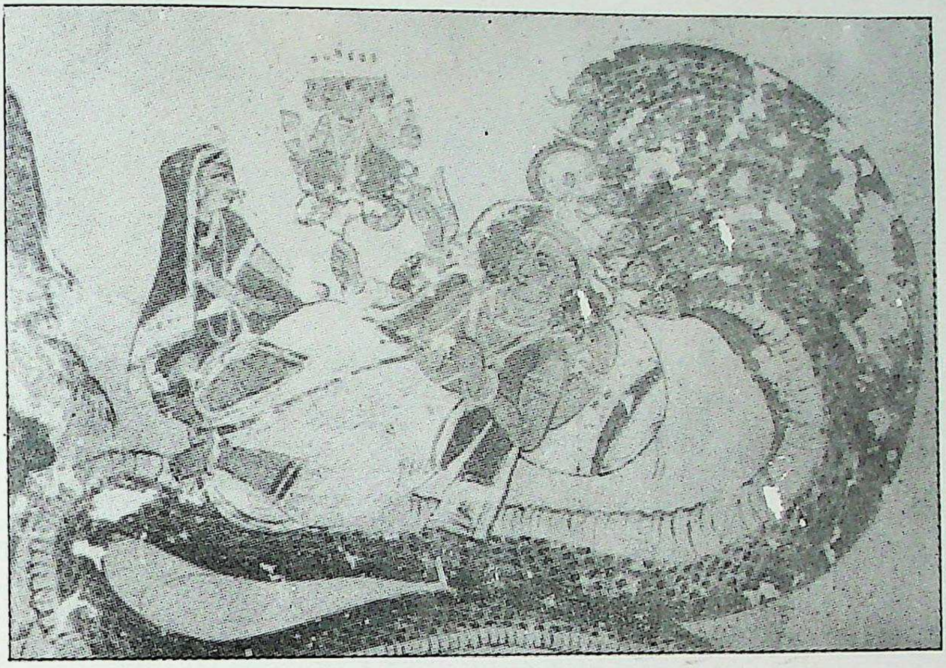

शेषशायी विष्णु

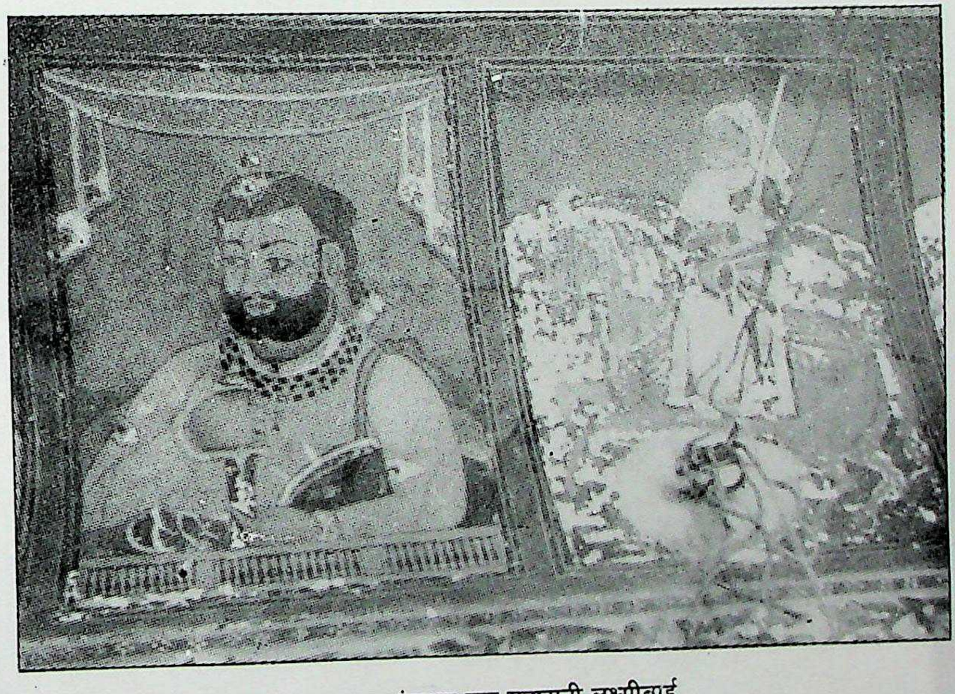

महाराजा गंगाधर राव महारानी लक्ष्मीबाई

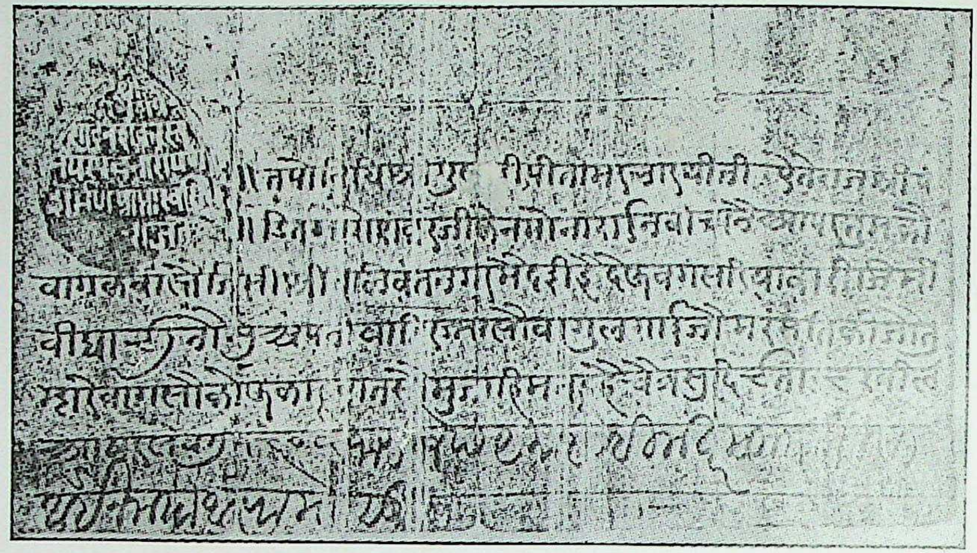

सूबेदार नारों शंकर का दानपत्र

महारानी लक्ष्मीबाई की मोहर